 ੧ਓ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत् नानकशाही ५४५
वर्ष ७ अंक ३ नवंबर 2013

संपादक : सिमरजीत सिंह *एम. ए., एम. एम. सी.*
सहायक संपादक : जगजीत सिंह *एम. ए., एम. एम. सी.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**



फैक्स: 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

कत की माई बापु कत केरा किदू थावहु हम आए ॥
अगनि बिंब जल भीतरि निपजे काहे कंमि उपाए ॥१॥
मेरे साहिबा कउणु जाणै गुण तेरे ॥ कहे न जानी अउगण मेरे ॥१॥रहाउ॥
केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥
केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥२॥
हट पटण बिज मंदर भंनै करि चोरी घरि आवै ॥
अगहु देखै पिछहु देखै तुझ ते कहा छपावै ॥३॥
तट तीरथ हम नव खंड देखे हट पटण बाजारा ॥
लै कै तकड़ी तोलणि लागा घट ही महि वणजारा ॥४॥
जेता समुंदु सागरु नीरि भरिआ तेते अउगण हमारे ॥
दइआ करहु किछु मिहर उपावहु डुबदे पथर तारे ॥५॥
जीअड़ा अगनि बराबरि तपै भीतरि वगै काती ॥
प्रणवति नानकु हुकमु पछाणै सुखु होवै दिनु राती ॥६॥ *(पन्ना १५६)*

श्री गुरु नानक देव जी गउड़ी (गउड़ी चेती) राग में उच्चारण किए गए उपरोक्त शबद में मनुष्य के अवगुणों का ज़िक्र करते हुए परमात्मा के गुणों को धारण करने की बात कह रहे हैं। गुरु जी का फरमान है कि मनुष्य को अनगिनत अवगुणों के कारण अनेकों योनियों (जन्मों) में भटकना पड़ता है। मनुष्य को यह पता नहीं कि उसने कौन-सा जन्म कब लिया अर्थात् उसके किस जन्म के मां-बाप कौन थे, उसे ज्ञात नहीं। मनुष्य के असंख्य अवगुणों के कारण उसे ज्ञान नहीं हो पाता कि उसका धरती पर मानव के रूप में जन्म क्यों हुआ। कहने से तात्पर्य कि अवगुणों के कारण मनुष्य अनेक योनियों में भटकता हुआ मानव-जन्म लेकर भी अपने वास्तविक उद्देश्य को नहीं जान पाता। जिस मनुष्य के अंदर अवगुणों का समावेश हो वो परमात्मा के गुणों के बारे में क्या जान पाएगा? मनुष्य के अंदर कोई (दैवी) गुण मौजूद न होने के कारण वो परमात्मा की भक्ति, प्रशंसा करने में असमर्थ रहता है। मनुष्य ने असंख्य अवगुणों के कारण वृक्षों, पौधों के जन्म देखे। कई बार वो पशु-जन्म में भी आया। अनेकों बार वो सांप के जन्म में पैदा हुआ तथा कई बार पक्षी बनकर उड़ता रहा। अवगुणों के कारण मनुष्य (शहरों आदि में) अनेक दुकानों को लूटता है, घरों पर हमला करता है अर्थात् सेंध लगाता है और चोरी किया हुआ माल घर लाता है। मनुष्य ये सब कुकर्म करता हुआ समझता है कि उसे कोई नहीं देख रहा, वो सबसे आंख बचाए हुए है, मगर वो यह भूल जाता है कि उसका कोई कर्म परमात्मा से छिपा हुआ नहीं।

गुरु पातशाह का आगे फरमान है कि मनुष्य अपने कुकर्मों से मुक्ति पाने हेतु भी भटकता रहता है। वो तट-तीर्थों पर जाता है, जगह-जगह क्षमा-याचना कर अवगुणों से छुटकारा पाने की भिक्षा मांगता है। यह समझ किसी-किसी को ही आती है वो भी भली-भांति आत्मविश्लेषण करने से कि परमात्मा तो हर मनुष्य के अंदर विद्यमान है, अत: मनुष्य का अवगुणों से छुटकारा अपने अंदर समाए परमात्मा को जान लेने से ही हो जाता है और हृदय-घर में प्रभु-गुण समा जाते हैं।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि जीवों के अंदर इतने (असंख्य) अवगुण भरे पड़े हैं जितना कि सागर में पानी अर्थात् सागर के पानी की तरह अतोल अवगुण हैं। परमात्मा कृपा करें तो ही जीव अपने अंदर जमा अवगुणों को खत्म कर सकते हैं। परमात्मा तो डूबते पत्थरों को भी पार लगा देता है, जीवों का उद्धार करना तो उसके लिए अति संभव है। अवगुणों से भरे मनुष्य का जीवन अग्नि की भांति जलता रहता है। उसके भीतर तृष्णा रूपी छुरी चलती रहती है। शबद की अंतिम पंक्ति में गुरु जी कहते हैं कि जो मनुष्य परमात्मा की रजा में रहना सीख जाता है, परमात्मा के भय में रहता है, उसके भीतर के सारे अवगुण मिट जाते हैं, वो दिन-रात सुखी रहता है तथा उसके हृदय में प्रभु-गुण समा जाते हैं।





श्री गुरु नानक देव जी का उपदेश : सच-आचार

जनता जब अत्यंत दुखों-कष्टों में फंस जाती है तो जनता का मालिक, खलकत का खालिक उसे दुखों-कष्टों में से बाहर निकालने का ढंग, साधन, अवसर बना देता है, क्योंकि मालिक, खालिक अपनी मलकियत, अपनी खलकत को आबाद तथा प्रफुल्लित होती देखना चाहता है। जब हज़ारों वर्षों से पराधीनता या राजसी गुलामी की चक्की में पिस रहे भारत भू-भाग के साधारण लोगों के दुख-कष्ट असहनीय हद तक बढ़ गए तो उनके निवारण हेतु, उनकी मुक्तावस्था के लिए, मर्जों, बीमारियों, असाध्य रोगों को दूर करने की अपार सामर्थ्य बख्शिश कर परमात्मा ने कलयुग का जहाज बनाकर श्री गुरु नानक देव जी को इस मातलोक में भेजा।

'सच-आचार' गुरु नानक नाम-लेवा सिक्खों को जन्म-घुट्टी के रूप में गुरु नानक पातशाह जी से उनकी पावन अकाली बाणी के अमृत वचनों द्वारा निर्मल सौगात के रूप में हासिल है। गुरु जी ने मनुष्यों की प्रत्येक कमजोरी, प्रत्येक अवगुण तथा समाज की प्रत्येक बुराई की गहराई से पहचान की तथा उससे मनुष्य-मात्र एवं समाज को रहित करके खालिस बनाने की दिशा में ठोस कार्य किया। यह कार्य आपने सच्चे सौदे को सरअंजाम देने, बल्कि उससे भी पहले पंडित गोपाल दास से सांसारिक एवं रूहानी विद्या सम्बंधी संवाद रचाकर ही आरंभ कर दिया था। पारिवारिक जजमान पंडित हरदयाल को, उसके द्वारा जनेव पहनाने की रस्म निभाते समय उसके साथ संवाद रचाकर सच-अचार द्रिढ़ करवाने के इस कार्य में और भी रवानी लाई गई।

गुरु जी द्वारा मोदीखाने की नौकरी करते समय भी सच-आचार का वास्तविक नमूना दर्शाया गया था। यह नौकरी त्यागकर आप जी ने लंबी प्रचार-यात्राओं का आरंभ सुलतानपुर लोधी की धरती से किया। उसके बाद आपकी ज़िंदगी का एक-एक पल इंसानी समाज में से कूड़-असत्य को खत्म करने तथा सच-आचार की पुनर्स्थापना करने के उद्देश्य को समर्पित हो गया। इस उद्देश्य को मूर्तिमान करने हेतु आप जी ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा की सारी प्रभु-प्रदत्त असीम शक्ति लगा दी।

गुरु पातशाह की सख्त मेहनत का सकारात्मक प्रभाव पड़ा। उन्होंने एक ऐसी 'सिक्ख संगत' सारी दुनिया को एक मीठी सुखदायक देन के रूप में दी जिसका आचार, जिसका कार-विहार, जिसका व्यापार केवल-मात्र सच के रंग में रंगा हुआ था। एक ऐसी सिक्ख संगत, जो बाबा जी के पद-चिन्हों पर चलती हुई नाम-सिमरन करती; जो अपने हाथों से सच्ची-सुच्ची किरत करती तथा उस किरत का मीठा फल जरूरतमंद एवं गरीबों-बेसहारों के साथ बांट कर खाती।

दस गुरु साहिबान की संजीदा तथा निर्मल अगुआई की छत्र-छाया में सिक्ख कौम का सच-आचार और भी परिपक्व होता रहा। दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक सिक्ख कौम ने खालसा स्वरूप ग्रहण करके सच-आचार की तब तक गैर-अनुमानित समझी जाती बुलंदियों को छुआ। दशमेश पिता ने अपने खालसे को रूहानी गुणों तथा नैतिकता में इस्पात के समान परिपक्वता देने हेतु इसको कुल दुनिया से विलक्षण, अखंड तथा खालिस रूप, पांच-ककारी रहित प्रदान करते हुए और पांच बाणियों की मर्यादा में बांध कर बख्शिश किया। गुरु जी द्वारा साजे-निवाजे खालसा ने अपने खालिस एवं विस्मादी चरित्र द्वारा दुनिया भर के लोगों को आश्चर्यचकित किया। बाबा बंदा सिंघ बहादर तथा उसके साथी सिंघों ने शहीदियां देते हुए विलक्षण हौसले तथा सिक्खी सिदक का नमूना दर्शाया। अठारहवीं सदी में हकूमती जब्र के अति कठोर दमन-चक्र ने भी खालसाई चरित्र को जैसे खूब ठोक-बजाकर परख लिया। जुल्मों एवं यातनाओं की भट्ठी में तपकर सिक्ख चरित्र की चमक-दमक में और भी बढ़ोतरी हुई। सिक्ख इतिहास में ऐसे सिक्खों की अनेक उदाहरणें अंकित हैं जिन्होंने हर प्रकार की कठोर से कठोर यातनाएं सह लीं, मगर सिक्खी स्वरूप को बरकरार रखा। भाई तारू सिंघ जी ने खोपड़ी उतरवानी स्वीकार कर ली, मगर अकाल पुरख की बख्शिश 'केशों' को नापाक कैंची न लगने दी। गुरु के सिंघों को गुरु-प्रदत्त एक ऐसा मजबूत एवं ठोस अनुशासन प्राप्त हुआ कि उन्होंने वैरी की स्त्री के प्रति भी पूर्ण साफ-स्वच्छ नीची नज़र रखकर दिखाई। औरत पर कभी हाथ न उठाया। वैरी के बच्चों को हाथ तक न लगाया। गुरु-हुक्म तथा गुरु-नेतृत्व में ढले तथा संवरे सिक्ख चरित्र ने देश एवं कौम की बेमिसाल सेवा की; मानवता की निष्काम सेवा निभाई। श्री गुरु नानक देव जी ने तत्कालीन समाज को दुखों-कष्टों में से काफी हद तक निकाल लिया था।

आज यदि हमारे सामने पुन: दुख-कष्ट बढ़ रहे हैं तो हमें गुरु नानक नाम-लेवा सिक्खों को अपने वर्तमान जीवन, रहन-सहन तथा कार्यों का गुरु जी की पावन बाणी की कसौटी पर परखकर लेखा-जोखा करना चाहिए कि आज हम गुरु नानक पातशाह के प्रचारित एवं प्रसारित गुरमति मार्ग के सच-आचार से कहीं भटक तो नहीं गए। ऐसा लेखा-जोखा हमें अवश्य ही हमारे वर्तमान घोर दुखों-कष्टों के चक्रव्यूह में से निकालने में सहायक हो सकता है। गुरु नानक पातशाह के सिक्ख होने की पहली कसौटी आत्म-कल्याण तथा दूसरी विश्व-कल्याण में बनता संभव योगदान डालना है। हमारे लिए इससे इधर-उधर हटकर विचरण करना कदाचित योग्य नहीं होगा। खुद के बनाए दुखों-कष्टों को पहचानकर उन्हें दूर करें एवं अन्य लोगों के दुखों-कष्टों के निवारण हेतु गुरु जी के जीवन तथा पावन बाणी से दिशा व प्रेरणा लेकर सच्चे संकल्पों तथा इरादों सहित चलें! इस रूप में गुरु जी का प्रकाश-पर्व मनाया सही अर्थों में सार्थक हो सकता है।



सिध गोसटि बाणी का साहितियक मूल्यांकन

-डॉ. मनजीत कौर*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में श्री गुरु नानक देव जी के पावन मुखारबिंद से उच्चरित बाणी १९ रागों में महला १ प्रकरण से संकलित है। गुरुदेव की सम्पूर्ण बाणी को विद्वानों ने विविध भागों में विभक्त किया है। डॉ रतन सिंघ (जग्गी) ने श्री गुरु नानक देव जी की बाणी को चार प्रमुख भागों में विभक्त किया है, यथा :

१. वृहदाकार बाणी
२. लघ्वाकार बाणी
३. वार
४. फुटकल पद-सलोक आदि।

वृहदाकार अर्थात् बड़े आकार की बाणियों में जपु जी साहिब, सिध गोसटि, बारह माहा (तुखारी) आदि प्रमुख हैं।

सिध गोसटि बाणी का संक्षिप्त परिचय : रामकली राग में उच्चरित पावन बाणी सिध गोसटि में ७३ पउड़ियां हैं जो कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पन्ना ९३८ से ९४६ पर सुशोभित हैं। गोसटि शब्द का साधारण अर्थ होता है-- संवाद, वार्तालाप। इस आशय से सिध गोसटि का अर्थ हुआ-- सिधों के साथ संवाद, वार्तालाप। गुरबाणी में स्पष्ट संकेत है कि जब तक इंसान दुनिया में रहे तब तक संवाद, वार्तालाप अनिवार्य है :

जब लगु दुनीआ रहीऐ नानक किछु सुणीऐ किछु कहीऐ ॥ *(पन्ना ६६१)*

यही नहीं, गुरु पातशाह ने तो यहां तक समझाया है कि अगर जीव में प्रभु-प्रियतम की ओर जाने वाले गुण मौजूद हों तो उन गुणों की सांझेदारी कर लेनी चाहिए, यथा :

गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
जे गुण होवन्हि साजना मिलि साझ करीजै ॥
साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ ॥
(पन्ना ७६५-६६)

महान विद्वान भाई गुरदास जी ने इस बाणी के रचना-- समय, स्थान तथा उद्देश्य का विस्तृत वर्णन किया है :

मेला सुणि सिवराति दा बाबा अचल वटाले आई। . . .
बाबा जाणी जाण पुरख कढिआ लोटा जहा लुकाई। *(वार १:३९)*

इस सम्बंधी पहली वार की ४४वीं पउड़ी में निष्कर्ष देखा जा सकता है :

बाबे कीती सिधि गोसटि सबदि सांति सिधां विचि आई।
जिणि मेला सिवराति दा खट दरसनि आदेसि कराई।
सिधि बोलनि शुभि बचनि धनु नानक तेरी वडी कमाई। . . .
बाबे कढि करि बगल ते चंबेली दुधि विचि मिलाई।
जिउ सागरि विचि गंग समाई ॥

सिध गोसटि बाणी का केंद्रीय भाव : किसी भी बाणी का केंद्रीय अर्थात् मूल भाव 'रहाउ' वाली पंक्ति में निहित होता है। 'रहाउ' का अर्थ 'ठहराव' माना गया है। इस आशय से 'रहाउ' का अर्थ हुआ उस बाणी को सहजता से समझने

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३

का प्रयास, जैसे सुखमनी साहिब की पहली असटपदी में 'रहाउ' की पंक्ति है :

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ (पन्ना २६२)

सम्पूर्ण बाणी में इसी भाव के दर्शन होते हैं। इसी प्रकार सिध गोसटि बाणी में 'रहाउ' की पंक्तियां हैं :

किआ भवीऐ सचि सूचा होइ ॥
साच सबद बिनु मुकति न होइ ॥ (पन्ना ९३८)

अर्थात् गृहस्थ छोड़ने का कोई प्रयोजन नहीं, जब तक माया के बंधनों से मुक्ति न मिले। प्रो साहिब सिंघ ने स्पष्ट किया है कि परमेश्वर की याद में जुड़ने से ही मन पवित्र होता है। जब तक प्रभु की महिमा में मन न जुड़े, तब तक माया से बचाव मुमकिन नहीं। समूची बाणी में इसी मूल भाव का विस्तार है।

सिध गोसटि बाणी का साहित्यिक मूल्यांकन : काव्य कवि की सशक्त अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति से ही चिरस्थाई बन सकता है। डॉ नलिन के शब्दों में-- "हृदयगत सघन और निर्बाध अनुभूति जब शब्दों के घुंघरू बांधकर उद्धाम वेग से स्वर ताल की चपलता से निपट नाच उठती है तब वह गीत बन जाती है।"

वस्तुत: कवि-कर्म के दो पक्ष हैं-- भाव पक्ष तथा कला पक्ष अर्थात् अनुभूति पक्ष एवं अभिव्यक्ति पक्ष। कवि-कर्म अपने आप में एक कठिन साधना है। इस तथ्य को तुलसीदास ने अपने शब्दों में बड़ी सुंदर अभिव्यक्ति दी है :

हृदय सिंधु मति सीप समाना।
स्वाति शारदा कहहिं सुजाना।
जो बरसद बर बारि विचारु।
होहिं कवित सुक्ता मार्ग चारु।

श्री गुरु नानक देव जी की बाणी का अनुभूति पक्ष इतना प्रबल है कि उसके फलस्वरूप अभिव्यक्ति पक्ष स्वत: ही परमार्जित होता गया। चिंतकों के चिंतनानुसार साहित्य में सत्य की साधना है तथा सौंदर्य की अभिव्यंजना है। इस संदर्भ में अगर विचार करें तो श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में तीनों रूपों के दर्शन सहजता से हो जाते हैं।

अनुभूति पक्ष : साहित्य को मनीषियों ने जीवन की आत्म-कथा माना है। इसे अभिव्यक्त करने का सबका अपना-अपना ढंग है, शैली है। यह कहना अतिकथनी न होगा कि यह शैली उतनी ही सुंदर व परिपक्व होगी, जितनी यह सत्य के करीब होगी। श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में सत्य (ईश्वर) का साक्षात्कार करने का सहज मार्ग है। मानवतावादी दृष्टिकोण, विश्वकुटुंबकम-भाव, सहजता, मृदुता आदि विलक्षण गुणों से ओत-प्रोत बाणी समूची मानवता की रहनुमाई करने में पूर्णतया सक्षम है।

दार्शनिकता : श्री गुरु नानक देव जी महान दार्शनिक थे। गुरुदेव के मुखारबिंद से उच्चरित प्रत्येक अक्षर अपने आप में संपूर्ण दर्शन है। सिध गोसटि बाणी के दार्शनिक पक्ष पर विचार करें तो स्पष्ट होता है कि ईश्वर एक है, लेकिन उस तक पहुंचने के मार्ग अलग-अलग हैं। सिध (नाथ) भी एक परमेश्वर को मानते हैं, लेकिन उसकी प्राप्ति हेतु उन्होंने जो मार्ग चुना वह गुरुदेव की बाणी के अनुसार अनुचित है। सिध अपनी दार्शनिकता का परिचय गृहस्थ त्यागने, जंगल में निवास करने, कंदमूल खाकर निर्वाह करने, जप-तप, कठिन साधना करके स्वयं को निर्लिप्त मानते हैं। अपने मार्ग को सर्वोत्तम मानते हुए गोरखनाथ के शिष्य लोहरीया ने योग की युक्ति को अत्यंत मनोरम एवं सुंदर मानते हुए तर्क प्रस्तुत किया कि हे नानक! तुम हमारा दर्शन एवं वेश धारण करो। हमारे बारह

संप्रदायों और षट्दर्शनों में से एक को तुम भी स्वीकार करो, क्योंकि इस युक्ति के फलस्वरूप मन को समझाया जा सकता है, फिर जन्म-मरण की चोटें नहीं खानी पड़ती, यथा :

दरसनु भेख करहु जोगिंद्रा मुंद्रा झोली खिंथा ॥
बारह अंतरि एकु सरेवहु खटु दरसन इक पंथा ॥
इन बिधि मनु समझाईऐ पुरखा बाहुड़ि चोट न खाईऐ ॥
नानकु बोलै गुरमुखि बूझै जोग जुगति इव पाईऐ ॥९॥ *(पन्ना ९३९)*

गुरु जी का सहज जवाब था कि मेरे अंतर्मन में सदैव बसने वाला शबद ही मेरी मुद्रा है, जो अहंकार और मोह से मुक्त रखता है। गुरु के शबद से काम, क्रोध, अहंकार की निवृत्ति होती है। ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध ही मेरी गुदड़ी तथा झोली है। परमेश्वर ही भवसागर से पार उतारने वाला है। अपने सच्चे नाम तथा न्याय के कारण प्रभु सत्य स्वरूप है तथा परखकर कही गई परम गुरु की बात भी सौ फीसदी खरी ही निकलती है।

उपरोक्त भाव को श्री गुरु नानक देव जी ने इस प्रकार अभिव्यक्त किया है :

अंतरि सबदु निरंतरि मुद्रा हउमै ममता दूरि करी ॥
कामु क्रोधु अहंकारु निवारै गुर कै सबदि सु समझ परी ॥
खिंथा झोली भरिपुरि रहिआ नानक तारै एकु हरी ॥
साचा साहिबु साची नाई परखै गुर की बात खरी ॥ *(पन्ना ९३९)*

गुरु साहिब ने अंत:करण की साधना पर बल दिया तथा कर्मकांडों की तुलना बंजर भूमि से की। जैसे बंजर भूमि में बोए बीज तथा उस पर की गई मेहनत-मशक्कत दोनों ही व्यर्थ चले जाते हैं वैसे ही कर्मकांडों में ये अमूल्य श्वासों रूपी बीज नष्ट हो जाते हैं।

श्री गुरु नानक देव जी की दार्शनिकता किसी शास्त्रीय नियमों पर आधारित न होकर आत्मानुभूति पर निर्भर है। उसमें उदात मूल्यों, संस्कारों का समावेश है। व्यवहारिक ज्ञान के कारण यह सहज साधना है, एक नवीन विचारधारा है, जिसे मनीषियों ने गुरमति ज्ञान की संज्ञा दी है। इस सहज मार्ग का सच्चे अर्थों में अनुकरण केवल ईश्वर-प्राप्ति की साधना ही नहीं अपितु आदर्श मानव की रचना है जो जीवन के प्रत्येक पक्ष अर्थात् आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सदाचारक, नैतिक, साहित्यिक आदि के बारे में सही चिंतन करने एवं सही निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है। निर्गुण स्वरूप में सगुण की झलक सहजता से मिल जाती है :

अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सरगुणु थीआ ॥
सतिगुर परचै परम पदु पाईऐ साचै सबदि समाइ लीआ ॥
एके कउ सचु एका जाणै हउमै दूजा दूरि कीआ ॥
सो जोगी गुर सबदु पछाणै अंतरि कमलु प्रगासु थीआ ॥
जीवतु मरै ता सभु किछु सूझै अंतरि जाणै सरब दइआ ॥
नानक ता कउ मिलै वडाई आपु पछाणै सरब जीआ ॥ *(पन्ना ९४०)*

रहस्यवाद : श्री गुरु नानक देव जी उच्च कोटि के रहस्यवादी बाणीकार हैं। गुरुदेव ने जिन अनुभूतियों द्वारा अकाल पुरख का साक्षात्कार किया वे अनुभूतियां ही काव्य रूप में अभिव्यक्त होकर रहस्यवादी बाणी कहलाईं। डॉ. त्रिलोचन

सिंघ ने इसे 'गुरमति रहस्यवाद' की संज्ञा से अभिहित किया है। उनके चिंतनानुसार सिक्ख का अपने अस्तित्व को अकाल पुरख की ज्योति में एकरूप करना 'गुरमति रहस्यवाद' है। जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी ने 'गुरमति रहस्यवाद' के पांच पड़ावों की सुंदर अभिव्यक्ति दी है-- धर्म खंड, ज्ञान खंड, श्रम खंड, कर्म खंड तथा सच खंड। सिधों के गृहस्थ धर्म को त्यागकर वनों में निवास करने, कंदमूल खाने और इसी को सर्वोत्तम क्रिया मानने वालों को बड़ी सहजता से गुरबाणी में समझाया गया है कि गृहस्थ जीवन में रहते हुए, गुरु से जीवन-युक्ति समझ कर सहजता से भवसागर से पार उतरा जा सकता है। इसके लिए जंगलों में भटककर कठिन साधना की आवश्यकता नहीं है। बाणी में अन्यत्र भी प्रमाण है :

हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति ॥ *(पन्ना ५२२)*

गृहस्थाश्रम ही साधना की कसौटी है जहां विषम परिस्थितियों में तथा माया में रहते हुए भी निर्लेप भाव से मुक्तावस्था प्राप्त की जा सकती है। सिधों ने प्रश्न किया कि गुप्त कौन है और मुक्त कौन है? कौन यहां आता है और चला जाता है तथा कौन है जो तीनों लोकों में समाया हुआ है?

घटि घटि गुपता गुरमुखि मुकता ॥
अंतरि बाहरि सबदि सु जुगता ॥
मनमुखि बिनसै आवै जाइ ॥
नानक गुरमुखि साचि समाइ ॥१३॥ . . .
किउ करि बाधा सरपनि खाधा ॥
किउ करि खोइआ किउ करि लाधा ॥
किउ करि निरमलु किउ करि अंधिआरा ॥
इहु ततु बीचारै सु गुरू हमारा ॥ (पन्ना ९३९)

श्री गुरु नानक देव जी का जवाब था कि दुर्मति (कुबुद्धि) ने इसे बांध रखा है और माया के झमेलों ने इसे पूर्णतया नष्ट कर दिया है। मनमुख ईश्वर को गंवा रहा है। गुरमुख सहजता से उसे पा रहा है। पूर्ण गुरु की प्राप्ति से अज्ञानता का अंधकार विनिष्ट हो जाता है तथा अज्ञानता मिटते ही अंत:करण में विद्यमान परमेश्वर मिल जाता है।

२७वीं पउड़ी में गुरमुख को श्वास-ग्रास ईश्वर की आराधना में लीन दर्शाकर ईश्वर में एक रूप होने के रहस्य को समझाया गया है :

गुरमुखि साचे का भउ पावै ॥ . . .
गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै ॥ (पन्ना ९४१)

श्री गुरु नानक देव जी का आध्यात्मिक रहस्यवाद सामाजिकता से ओत-प्रोत है जहां किरत करो, नाम जपो और वंड छको का पावन संदेश विद्यमान है। यह रहस्यवाद *"मनि जीते जगु जीतु"* जैसे गूढ़ रहस्य के सिद्धांत पर आधारित होने के कारण सहज, सरल एवं बोधगम्य है।

रस योजना : साहित्य का अनुभूति पक्ष इसके बिना अधूरा है। श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में इसकी सुंदर अभिव्यंजना है। गुरुदेव ने अकाल पुरख के निर्गुण एवं सगुण स्वरूप को *"आपे रसीआ आपि रसु"* कहकर कलयुगी जीवों को उसी एक की उपासना हेतु प्रेरित किया है। लोकमंगल की भावना से परिपूर्ण श्री गुरु नानक देव जी की बाणी भक्ति काव्य है, इस कारण इसमें शांत एवं शृंगार रस की प्रधानता है। सिध गोसटि बाणी में अद्भुत रस की भी सुंदर अभिव्यक्ति है। ईश्वर के आलौकिक रहस्य को जानने की तीव्र इच्छा तथा गुरु द्वारा उसकी सर्वव्यापकता के बोध से विस्मादी प्रभाव की अनूठी प्रस्तुति अद्भुत रस की

अभिव्यंजना करती है। सिध गोसटि बाणी की अंतिम पउड़ी में इसका सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किया गया है :

तेरी गति मिति तूहै जाणहि किआ को आखि वखाणै ॥
तू आपे गुपता आपे परगटु आपे सभि रंग माणै ॥ . . .
अबिनासी प्रभि खेलु रचाइआ गुरमुखि सोझी होई ॥
नानक सभि जुग आपे वरतै दूजा अवरु न कोई ॥
(पन्ना ९४६)

अभिव्यक्ति पक्ष : श्री गुरु नानक देव जी को अकाल पुरख से जैसी प्रेरणा हुई उन्होंने वैसी ही बाणी उच्चारण की। इस तथ्य को उन्होंने स्पष्ट किया :

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो ॥ *(पन्ना ७२२)*

वस्तुत: जिस रचयिता की जीवन-अनुभूति जितनी गंभीर होगी, चिंतन जितना व्यापक और विशाल होगा, उसकी अभिव्यक्ति उतनी ही सरल, सहज तथा निर्मल होगी। आध्यात्मिक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का साधन अपने आप में अपर्याप्त होता है। मनीषियों के चिंतनानुसार अनुभूत सत्य को व्यक्त करने के प्रयत्न में साधक जब वाणी का प्रयोग करता है तो उसमें से काव्य की निर्मल सरिता स्वयं ही फूट निकलती है। इस आशय से श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उच्चरित बाणी सिध गोसटि के अभिव्यक्ति पक्ष में विचार करें :

भाषा : भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। श्री गुरु नानक देव जी बहुभाषी एवं उच्च कोटि के बाणीकार थे। वे पंजाबी, अरबी, फारसी, हिंदी, गुजराती, ब्रज, संस्कृत, उर्दू आदि भाषाओं के विशिष्ट ज्ञाता थे। सिध गोसटि बाणी में ब्रज तथा खड़ी बोली की प्रधानता है। साथ ही श्रोता के अनुरूप भाषा का रूप परिवर्तन काव्य है, यथा ९वीं पउड़ी में इस विविधता के दर्शन सहज ही हो जाते हैं :

दरसनु भेख करहु जोगिंद्रा मुंद्रा झोली खिंथा ॥
बारह अंतरि एकु सरेवहु खटु दरसन इक पंथा ॥
इन बिधि मनु समझाईऐ पुरखा बाहुड़ि चोट न खाईऐ ॥
नानकु बोलै गुरमुखि बूझै जोग जुगति इव पाईऐ ॥
(पन्ना ९३९)

इसके अतिरिक्त प्रचलित मुहावरों, युक्तियों का प्रयोग करके मानो भाषा में चार चांद लग गए। *"इह मनु मैगलु", "ससि घरि सूरु समावै"* आदि अनेकों उद्धरण सिध गोसटि बाणी में दृष्टिगत होते हैं।

शब्द-चयन : श्री गुरु नानक देव जी का शब्द-चयन उत्कृष्ट है। डॉ. पदम गुरचरण सिंघ के शब्दों में-- "शब्द-चयन विचारानुकूल है। शब्दों में भार वहन करने की पूर्ण क्षमता है। शब्दों के चयन में कवि (गुरु जी) ने गागर में सागर भरा है।"

श्री गुरु नानक देव जी का शब्द भंडार अगाध है। इसके साथ ही 'सिध गोसटि' बाणी का अधिकांश भाग सूत्रात्मक शैली में वर्णित है। इसके अतिरिक्त योग सम्बंधी प्रतीकों का भी सुंदर वर्णन सिध गोसटि बाणी में दर्शनीय है :

त्रै सत अंगुल वाई अउधू सुंन सचु आहारो ॥
गुरमुखि बोलै ततु बिरोलै चीनै अलख अपारो ॥
त्रै गुण मेटै सबदु वसाए ता मनि चूकै अहंकारो ॥
अंतरि बाहरि एको जाणै ता हरि नामि लगै पिआरो ॥
सुखमना इड़ा पिंगुला बूझै जा आपे अलखु

लखाए ॥
नानक तिहु ते ऊपरि साचा सतिगुर सबदि समाए ॥ *(पन्ना ९४४)*

इसके अतिरिक्त भावात्मक रहस्यपरक तथा चिंतन सम्बंधी प्रतीकों के साथ-साथ योग सम्बंधी प्रतीकों का सिध गोसटि बाणी में बहुतायत से प्रयोग हुआ है।

अलंकार योजना : श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में अलंकारों हेतु कदाचित प्रयास नहीं किया गया, अपितु वे सहजता से बाणी में प्रवेश कर गए हैं। डॉ. पदम ने श्री गुरु नानक देव जी की अलंकार योजना के संदर्भ में बड़ा सटीक सिखा है-- "श्री गुरु नानक देव जी कला को जीवन के लिए मानते थे। वे बाणी को जनहित, लोकमंगल और सर्वोदय का साधन मानते थे। अत: श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में अलंकार स्वत: आ गए हैं। वे सहज एवं अकृत्रिम हैं।"

सिध गोसटि बाणी में उपमा तथा रूपक अलंकार की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। इसके अतिरिक्त अन्योक्ति, विरोधाभास, भ्रांति आदि अलंकारों का भी प्रयोग बड़ी सहजता से किया गया है।

छंद योजना : श्री गुरु नानक देव जी ने स्वयं को साइरु अर्थात् कवि कहा है :

नानकु साइरु एव कहतु है सचे परवरदगारा ॥
(पन्ना ६६०)

इस तथ्य के अनुसार कई विद्धानों ने उन्हें छंद-शास्त्र का पूर्ण ज्ञाता माना है। डॉ. कोहली आदि कुछ विद्धानों ने इस संदर्भ में जो विचार व्यक्त किए हैं उससे निष्कर्षत: यही कहा जा सकता है कि आध्यात्मिक विचारों की गहनता छंदों के बंधन से प्राय: मुक्त ही होती है। फिर भी सिध गोसटि बाणी में चौपई आदि छंदों का प्रयोग बहुतायत से हुआ है :

गुरमुखि रतनु लहै लिव लाइ ॥
गुरमुखि परखै रतनु सुभाइ ॥
गुरमुखि साची कार कमाइ ॥
गुरमुखि साचे मनु पतीआइ ॥
गुरमुखि अलखु लखाए तिसु भावै ॥
नानक गुरमुखि चोट न खावै ॥३५॥
(पन्ना ९४२)

इसके अतिरिक्त सोरठा, गीता, दोहिरा, सोलहा, रूपमाला आदि छंदों का श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में सुष्ठु प्रयोग हुआ है। डॉ. गुरशरण कौर (जग्गी) के विचारानुसार-- "गुरु जी ने अपनी छंद योजना को भावों द्वारा अनुशासित किया है। उसकी बुनियादी ज़रूरत राग या संगीत है।"

संगीतात्मकता : श्री गुरु नानक देव जी महान संगीतज्ञ थे। उनके संगीत में भारतीय तथा फारसी स्वरूप को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। संगीत का अंतिम लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति है। गुरदेव जी की बाणी सिध गोसटि रामकली राग में उच्चरित बाणी है। श्री गुरु नानक देव जी की बाणी के प्रत्येक शब्द में संगीत है जो मन को मुग्ध कर उस पर जादू-सा प्रभाव डालने में सक्षम है। डॉ. जयराम मिश्र के शब्दों में-- "गुरबाणी की स्वर लहरी में अपूर्व माधुर्य है।" एक अन्य चिंतक के चिंतनानुसार-- "नानक नाम है नाद का। श्री गुरु नानक देव जी ने योग नहीं किया, तप नहीं किया, ध्यान नहीं किया, श्री गुरु नानक देव जी ने सिर्फ गाया और गाकर (प्रभु को) पा लिया, पर गाया पूरे प्राणों से कि गीत (बाणी) ही ध्यान बन गया, गीत (बाणी) ही योग बन गया और गीत (बाणी) ही तप बन गया।"

(शेष पृष्ठ १९ पर)

श्री गुरु नानक देव जी का किरत-सिद्धांत

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

श्री गुरु नानक देव जी गरीबों, अनाथों, निमाणों और बेसहारों का सहारा बने। हउमै की ज्वाला में जले हुए हुक्मरानों ने समझ लिया था कि वे ही प्रजा के पालनकर्त्ता हैं तथा प्रजा उनकी गुलाम बनकर रहे। धर्मी लोगों पर कटाक्ष करने वाले, गरीबों की कमाई से अपने खज़ाने भरने वाले अहंकारी हुक्मरानों की आंखें उस समय खुलीं, जब श्री गुरु नानक देव जी ने अपने पहले सिक्ख, एक गरीब किरती (श्रमिक) भाई लालो के घर से भोजन छककर, अहंकारियों के पकवानों को ठुकराकर किरत (श्रम) की नींव को मज़बूती प्रदान की। मलिक भागो के शाही पकवान, उसके भेजे हुए सिपाही, उसकी धमकियां निर्भय गुरु-बाबा श्री गुरु नानक देव जी को उनके इरादे से डिगा न सकीं। वास्तव में किरती, धर्मी व्यक्तियों का सहारा बनने वाले श्री गुरु नानक देव जी ने अपने हाथों से खुद किरत की और अपने संगी-साथियों, पैरोकारों को भी हाथों से खुद किरत करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने जनसाधारण के लिए एक नया किरत-मार्ग पैदा कर दिया, जिससे हाथ कार (काम) की तरफ और चित्त (मन) निरंकार (प्रभु) के साथ जुड़ा रहे। मोदीखाने में नौकरी करते वक्त लोगों को श्री गुरु नानक देव जी से पूरा तौल, साफ-सुथरा सौदा और वाज़िब रेट प्राप्त हुआ। लोगों ने गुरु साहिब की वाह-वाह की और धन्य नानक कहा। सच्ची-सुच्ची किरत से मोदीखाने की कमाई में काफी बढ़ोतरी हुई तथा गुरु जी के साथ-साथ उनके माता-पिता, बहन बेबे नानकी जी और जीजा भाई जैराम जी की भी प्रशंसा लोगों ने दिलखोल कर की। श्री गुरु नानक देव जी ने सिक्ख धर्म में धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ हाथों से किरत करने को जीवन का ज़रूरी अंग बनाया। गुरु जी ने श्री करतारपुर साहिब में खूब हल चलाया, खोतों में काम किया। भाई गुरदास जी के *"पहर संसारी कपड़े मंजी बैठ कीआ अवतारा"* पावन वचन के अनुसार सतसंगत करने, अमृत वेला की संभाल करने, नित्तनेम करने, आए मेहमान के लिए लंगर तैयार करने के साथ-साथ गुरबाणी के गायन-अभ्यास को भी मनुष्य-जीवन का अंग बनाया। गुरु साहिब ने गृहस्थ को जीवन का ज़रूरी अंग कहा।

श्री गुरु नानक देव जी अपने समकालीन धार्मिक एवं राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों से रती भर नहीं डरे और न ही किसी के साथ पक्षपात किया। गुरु जी ने कहा कि चढ़ावे की खातिर लोग अपने घर को ही विशेष पूजा-स्थल बना लेते हैं। निठल्ले लोग योगी बनकर, कान फड़वाकर, कानों में मुंदराएं डाले घूम रहे हैं। ऐसे (धार्मिक) लोगों के साथ नाता नहीं रखना चाहिए, जो केवल अपने पेट (स्वार्थ) की खातिर अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं। अगर प्रभु-प्राप्ति करनी है तो घर-गृहस्थ में रहकर, हाथों

(शेष पृष्ठ २८ पर)

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केंद्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५२१*

वैराग्य और वीरता की प्रतिमूर्ति : श्री गुरु तेग बहादर साहिब

-डॉ. जय भगवान गोयल

आदर्श व्यवहारिक जीवन को आध्यात्मिक चिंतन की आधार-भूमि मानने वाले गुरु साहिबान ने अनासक्ति एवं अलिप्तता के दर्शन को दृढ़ता से अंगीकार किया था, अत: सभी गुरु साहिबान हरि-भक्ति में लवलीन परम संत थे, यद्यपि कालांतर में उन्हें अधर्म, अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध खड्ग धारण करने को भी विवश होना पड़ा। यवन शासकों की धार्मिक कट्टरता तथा श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को खड्ग धारण करने को बाध्य किया था, लेकिन साथ ही वे निरंतर अपनी आध्यात्मिक साधना में भी प्रवृत्त रहे। श्री गुरु तेग बहादर साहिब भक्ति और शक्ति के पुंज इसी महापुरुष के सुपुत्र थे। वे त्याग और वैराग्य की प्रतिमूर्ति थे।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का जन्म सन् १६२१ में श्री अमृतसर (गुरु के महल) में हुआ था। बचपन में ही वे साहस और शक्ति के पुंज थे, निर्भयता और स्वतंत्रता के प्रतीक थे। उनमें अध्यात्म और वीरता का अद्भुत सामंजस्य था। वे एक अनासक्त योगी का सा जीवन व्यतीत कर रहे थे। भौतिक पदार्थों के प्रति उनके मन में कोई आसक्ति नहीं थी। वे तो एक विरक्त साधु की भांति निरंतर हरि-भक्ति में तल्लीन रहते थे। बकाला ग्राम में वे लगभग २१ वर्ष तक ईश-चिंतन करते रहे। इस अवस्था में वे न किसी की कुछ सुनते थे, न किसी से कुछ बोलते थे। कवि भाई सुक्खा सिंघ ने उनकी इस अवस्था का वर्णन इस प्रकार किया है :

लागी समाध इह बिधि प्रकार।
बोले न बचन को कहे हजार।११३।१।
(गुरबिलास)

महाकवि भाई संतोख सिंघ ने भी उनके चरित्र का विश्लेषण करते हुए उनके संत स्वभाव का निरूपण इस प्रकार किया है :

नहि मन कुछ श्री तेग बहादर।
इक रस ब्रिती अनादर सादर।
(गुर प्रताप सूरज, रास ८:५५:४५)

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का बाल्यावस्था का नाम 'तिआगमल' था जो उनके विरक्त स्वभाव के सर्वथा अनुरूप था। पैंदे खां नाम के एक कृतघ्न एवं विश्वासघाती पठान ने जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पर अकारण आक्रमण किया तो किशोरावस्था में ही 'तिआगमल' जी ने अपनी तेग से ऐसे जौहर दिखाए कि तभी से उनका नाम 'तेग बहादर' पड़ गया। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने पुन: मानवीय स्वतंत्रता के महान् आदर्श के लिए आत्म-बलिदान देकर 'तिआगमल' नाम को भी सार्थक कर दिखाया। एक ओर उन्होंने धर्म-असहिष्णु एवं अत्याचारी शक्तियों की चुनौतियों का दृढ़तापूर्वक सामना किया और दूसरी ओर वसुधा के संपूर्ण राज्य को बालू की भीति के समान मिथ्या मानकर उसके परित्याग का आदर्श प्रस्तुत किया। मनुष्य-मात्र की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए उन्होंने स्वयं को आत्मोत्सर्ग के लिए प्रस्तुत कर दिया। उनका निश्चय था-- *"सिर दीजै बांहि न छोडीऐ।"* तथा-- *"धर पईए धरम न छोडीऐ।"*

बिक्रमी संवत् १७३२ (सन् १६७५) को दिल्ली के चांदनी चौक में एक विशाल जनसमूह के सामने गुरु जी को शहीद कर दिया गया था। गुरु जी शीश देकर *'हिंद की चादर'* बन गए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब सिक्ख धर्म परंपरा में एक विशिष्ट शहीद हैं।

बलिदान की विलक्षणता : किसी आस्था या विश्वास के लिए अथवा किसी आदर्श या सिद्धांत की रक्षा के लिए सहर्ष आत्मोत्सर्ग कर देना ही 'शहीदी' का लक्षण है। 'शहीदी' की अवधारणा का मूलाधार बलिदान एवं त्याग है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का बलिदान ऐसा ही विलक्षण एवं उदात्त है। उनकी शहीदी की महिमा का वर्णन उनके सुपुत्र श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस प्रकार किया है :

तिलक जंञू राखा प्रभ ता का ॥
कीनो बडो कलू महि साका ॥
साधन हेति इती जिनि करी ॥
सीसु दीआ परु सी न उचरी ॥१३॥
धरम हेत साका जिनि कीआ ॥
सीसु दीआ पर सिररु न दीआ ॥
नाटक चेटक कीए कुकाजा ॥
प्रभ लोगन कह आवत लाजा ॥१४॥
दोहरा ॥ ठीकरि फोरि दिलीसि सिरि प्रभ पुर कीया पयान ॥
तेग बहादर सी क्रिआ करी न किनहूं आन ॥१५॥
तेग बहादर के चलत भयो जगत को सोक ॥
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुर लोक ॥१६॥५॥
(बचित्र नाटक)

उनकी शहीदी में कश्मीरी पंडितों की 'शरणागत रक्षा' का भाव अवश्य है, जिसे *"बांह पकरीए तां बांह न छोडीए"* के शब्दों में व्यंजित किया जाता रहा है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब का आत्म-बलिदान केवल इस प्रण को निभाने मात्र के लिए ही नहीं था, वरन् इस बलिदान का लक्ष्य इससे कहीं अधिक व्यापक एवं उदात्त था। वे एक आस्था और सिद्धांत के लिए शहीद हुए थे, न कि मात्र अपने प्रण की रक्षार्थ अथवा शरणागत की रक्षार्थ। वे अपने बलिदान से स्वाभिमान खो चुकी जनता को सर ऊंचा करके कुर्बान होने के लिए तैयार कर कर रहे थे। उनका यह कर्म-सौंदर्य उनकी अद्भुत वीरता का ही परिचायक है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने हिंदुओं, विशेष रूप से ब्राह्मणों के धार्मिक आचरण, विश्वासों एवं आस्थाओं की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया था। न तो उनका इस प्रकार के धार्मिक आचरण में अपना कोई विश्वास था और न ही उनके निजी धर्माचरण पर संभवत: कोई प्रत्यक्ष संकट ही था। 'तिलक' और 'जनेऊ' धारण करने में उनकी निजी आस्था कतई नहीं थी। श्री गुरु नानक देव जी ने स्पष्ट रूप से 'जेनऊ' धारण करने का निषेध किया था, लेकिन फिर भी श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने जनेऊ की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया। वस्तुत: जनेऊ तो एक प्रतीक है। वे तो इसलिए शहीद हुए कि उन्हें यह सह्य नहीं था कि कोई एक धर्मावलम्बी दूसरे धर्मावलम्बी को उसका धर्माचरण करने से रोके और उसे अपना धर्म-कर्म अपनाने के लिए विवश करे। फिर चाहे वह हिंदू का धर्म हो या मुसलमान का। उनका तो स्वतंत्र, स्वच्छंद धर्माचरण में विश्वास था और इसी धार्मिक स्वतंत्रता की रक्षा के लिए उन्होंने अपना बलिदान दिया था।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का विरोध इसलाम या किसी अन्य धर्म से नहीं था, वरन् औरंगजेब और उसके जुल्मों से था जो कट्टरपंथी मुल्लाओं और काजियों के कहने से दमनकारी धर्म-चक्र का प्रवर्तन कर रहा था। वस्तुत: श्री

गुरु तेग बहादर साहिब मनुष्य-मात्र की, समूह धर्मों की स्वतंत्रता के लिए शहीद हुए, न कि किसी एक धर्म की रक्षा के लिए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने अत्याचार, आतंक, धर्मान्धता एवं असहिष्णुता के विरोध में तथा सत्य, न्याय, धार्मिक सहिष्णुता एवं धर्माचरण की स्वतंत्रता के महान् आदर्श के लिए आत्म-बलिदान दिया था। यह दासता की मनोवृत्ति के विरुद्ध, स्वातंत्र्य चेतना के लिए किया गया महान बलिदान है। यह निरंकुशता और दमन के खिलाफ निर्भयता एवं साहस की लड़ाई है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने निर्भयता और साहस के साथ इतिहास की चुनौतियों का सामना किया। उनकी व्यक्ति-चेतना की स्वच्छंदता और स्वतंत्रता में दृढ़ आस्था थी। उसी की रक्षार्थ उन्होंने यह आत्म-बलिदान दिया था और यही उनकी सबसे बड़ी विशिष्टता और विलक्षणता है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब निरंतर अध्यात्म-चेतना में स्थित रहने वाले और उच्च मानवीय, नैतिक एवं उदात्त मूल्यों में विश्वास रखने वाले महान् संत थे। आत्मा और परमात्मा की सत्यता और मानव-एकता के सिद्धांत में भी उनका दृढ़ विश्वास था, इसलिए उन्होंने सहिष्णुता, न्याय, सत्य, स्वतंत्रता आदि महान् मूल्यों की स्थापना के लिए आत्मोत्सर्ग किया। उन्होंने सांसारिकता से अनासक्त और अलिप्त रहकर, अहंकार को त्याग कर एक महान् कर्मयोगी की भांति दृढ़ता, धैर्य, निर्भीकता एवं वीरता का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किया। उनका बलिदान भी उनकी स्वातंत्र्य-चेतना का प्रतीक है, जो उनके रहस्यात्मक अनुभवों और अध्यात्म-चिंतन की भी देन है। यही स्वातंत्र्य-चेतना वे अपने युग के जनमानस में जागृत करना चाहते थे। इसमें कोई संदेह नहीं कि इसमें वे पूर्णतया सफल भी हुए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब के महान् बलिदान ने स्वतंत्रता, वीरता एवं निर्भीकता की एक प्रखर चेतना उत्पन्न की। श्री गुरु तेग बहादर साहिब का बलिदान विवशता अथवा असहाय दशा को प्रकट नहीं करता, वरन् वीरता, दृढ़ता, साहस एवं निर्भीकता का एक ऐसा ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो विश्व-इतिहास में दुर्लभ है। स्वातंत्र्य चेतना की उपलब्धि के लिए आत्म-बलिदान का जो मार्ग श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने चुना था, वही आगे चलकर हमारे हर आंदोलन की आदर्श नींव बना। श्री गुरु तेग बहादर साहिब द्वारा संस्थापित स्वातंत्र्य-चेतना एवं धर्म-निरपेक्षता अथवा धर्म-स्वतंत्रता का महान् आदर्श आज के मनुष्य का सबसे बड़ा लक्ष्य और आदर्श है।

देश में स्वतंत्रता की जो चेतना मरने लगी थी, वह पुन: जीवित हो उठी। हिंदुओं की सुप्त वीर-शक्ति चंडी का रूप धारण करके प्रकट हो गई। एक नवीन एवं प्राणवान् सामाजिक, नैतिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक चेतना ने जन्म लिया, जिसने आगे चलकर एक सशक्त आंदोलन का रूप धारण कर लिया और भारत के इतिहास को एक नया मोड़ दिया।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का बलिदान रचनात्मक एवं स्फूर्तिदायक था। उनके बलिदान ने एक अद्भुत चमत्कार उपस्थित कर दिखाया। असत्य, अन्याय एवं अधर्म के विनाश के लिए एक नई वीर-शक्ति ने जन्म लिया। एक नई चेतना जाग उठी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहीदी ने अत्याचारी एवं दमनकारी मुगल शासन की ऐसी जड़ें हिलाईं कि वह पुन: स्थापित नहीं हो सका और धीरे-धीरे विनष्ट हो गया। साथ ही भारतीयों में दासता, अन्याय, अत्याचार, आतंक,

उत्पीड़न को सहन न करने और अपनी स्वातंत्रय-चेतना की रक्षा के लिए बलिदान देने की परंपरा की शुरुआत भी यहीं से होती है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान ने उनके अनुयायियों को भयभीत नहीं किया, वरन् उनमें इतनी दृढ़ता, धैर्य, शक्ति, साहस, निर्भीकता एवं निष्ठा पैदा की कि वे सत्य और न्याय के लिए निरंतर अपना बलिदान देते चले गए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान की क्या-क्या प्रतिक्रियाएं हुईं, क्या-क्या परिणाम निकले, इसके लिए 'स्री गुर शोभा', 'गुर बिलास', तथा 'गुर प्रताप सूरज' आदि के साक्ष्य उस युग की लोक-चेतना के ऐतिहासिक दस्तावेज़ हैं। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवि भाई सेनापती ने 'स्री गुर शोभा' में उनके बलिदान का अभिनंदन इस प्रकार किया है :

प्रगट भए गुरू तेग बहादर।
सगल स्रिसटि पै ढापी चादर।
करम धरम की जिनि पति राखी।
अटल करी कलजुग मै साखी ॥४॥
सगल स्रिसटि जाका जस भयो।
जिह ते सरब धरम बच्यो।
तीन लोक मै जै जै भई।
सतिगुरू पैज राखि इम लई ॥५॥
तिलक, जनेऊ और धरमसाला।
अटल करी गुर भए दिआला।
धरम हेति प्रभु पुरहि सिधाए।
गुरू गोबिंद सिंघ कहिलाए ॥६॥

'स्री गुर शोभा' गुरु जी के बलिदान के तुरंत बाद की रचना है, इसलिए इसमें तात्कालिक प्रतिक्रिया का प्रमाणिक वर्णन है। इसके अनुसार, "गुरु जी ने हिंदुओं के तिलक-जनेऊ की ही रक्षा नहीं की, वरन् सम्पूर्ण सृष्टि की चादर बनकर सर्व-धर्म-कर्म की रक्षा की। तीनों लोकों में उनकी जय-जयकार हुई। सारी सृष्टि में उनका यश फैल गया।"

'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' इस घटना के लगभग १५० वर्ष पश्चात् की रचना है। इस समय तक इतिहास कई करवटें बदल चुका था। यवनों, हिंदुओं, सिक्खों के बीच बहुत कुछ घटित हो चुका था। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने निर्भीकता, साहस, दृढ़ता, वीरता एवं बलिदान की जिस परंपरा का प्रवर्तन किया था, वह अपना रंग दिखा चुकी थी, यवन-शासन डोल चुका था। गुरु जी के महान बलिदान की विशिष्टता, महानता एवं परिणामों आदि का भाई संतोख सिंघ द्वारा किया गया निरूपण अत्यंत सार्थक है :

हिंदू धरम रखहिं जग मांही।
तुमरे करे बिनस है नाही।... (रास १२:६४:४१८)
सिर दे हिंदुनि धरम उबारहि।
तुरक राज की जरां उखारहि।
धंन गुरू तुम बिन अस काजू।
अपर करीह को दिखयन आजू।...
हिंदू धरम लियो बचाइ।
सभि सुर गन की कीनी सहाइ।... (रास १२:६६)
तोम तेज तुरकेश तमीपति।
फीको परयो प्रकाश भयो हति।
शरहा कुचलणी निशा बिनाशी।
हिंदू कोक पांइ सुखरासी। (रास १२:६८:२७)

निःसंदेह श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने अपना शीश देकर हिंदू धर्म की रक्षा की और धर्मान्ध तुर्केश्वर के राज्य की जड़ें उखाड़ीं। सारे जगत ने कृतज्ञता के भाव से अभिभूत होकर उनका अभिनंदन किया, क्योंकि उनका बलिदान अन्य सभी से विशिष्ट था, महान् था, उदात्त था।

(साभार : पुस्तक 'सिक्ख चिंतन का आधुनिक संदर्भ')



श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी में वैराग्य-भावना

-डॉ. निर्मल कौशिक*

सिक्ख धर्म की गुरु परंपरा के नवम गुरु श्री गुरु तेग बहादर साहिब भारतीय इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान के अधिकारी हैं। उनका बलिदान एवं उनका भक्तिपरक दृष्टिकोण ही उनका परिचय है। उन्होंने अन्य गुरुओं के समान ही सिक्ख धर्म में अपने अनुभवों से नई उद्भावनाओं और सामाजिक अवधारणाओं को नई दिशा देकर जनता का मार्गदर्शन किया। तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप दैवी प्रेरणा का परिणाम समझकर उन्होंने अपने आप का बलिदान देने में भी हिचकिचाहट नहीं की। उनके बलिदान से सिक्ख धर्म नवीन ढंग से पल्लवित, पुष्पित और फलित हुआ। सिक्ख मर्यादा के अनुसार वे पूर्ण संत, गुरमुख और ब्रह्मज्ञानी थे। उनके समक्ष आदि पांच गुरुओं की बाणी प्रस्तुत थी। उन्होंने उस बाणी का अध्ययन, चिंतन और मनन किया। उन्होंने अपनी बाणी को और भी सरलतम् रूप में जनता के समक्ष प्रस्तुत किया। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने सतत् भगवत्-चिंतन किया और आलौकिक सत्ता को स्वीकार करते हुए लौकिक शक्तियों के आगे झुकने से इंकार कर दिया।

श्री गुरु नानक देव जी तथा अन्य सिक्ख गुरुओं ने हरि-भक्ति को ही सर्वश्रेष्ठ साधना माना है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने हरि-भक्ति को निर्भय पद प्रदान करने वाली कहा है। उनका मत है कि भक्ति से ही सब संकटों का नाश होता है और परमात्मा के दर्शन होते हैं। उसके समान और कुछ नहीं है। हरि-भक्ति के बिना मनुष्य मन के फंदे में फंसा रहता है और उसका जीवन व्यर्थ चला जाता है। भक्तिविहीन व्यक्ति को श्वान के समान कहा है। उन्होंने अपनी बाणी में वैराग्य-भावना का विशदता से निरूपण किया है।

सिक्ख मत में वैराग्य का महत्त्व आरंभ से ही मान्य रहा है। श्री गुरु नानक देव जी बचपन से ही विरक्त स्वभाव के थे। इसी प्रकार नवम् गुरु श्री गुरु तेग बहादर साहिब भी वैराग्य की साक्षात् मूर्ति थे। यह विरक्ति या वैराग्य-भावना संसार से विरक्त होने की नहीं थी, बल्कि संसार में रहते हुए और संसार की नश्वरता को मानते हुए सांसारिक मोह-माया से निर्लिप्त रहने की थी :

रामु गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवारु ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारु ॥
चिंता ता की कीजीऐ जो अनहोनी होइ ॥
इहु मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ ॥
(पन्ना १४२९)

गुरु जी बाबा बकाला में लगभग २० वर्षों तक अनासक्त भाव से रहे। उन्होंने संसार की नश्वरता को और स्वप्नवत् मिथ्या मायाजाल को अच्छी प्रकार समझ लिया था। संसार की अस्थिरता, शरीर की नश्वरता, ईश्वर-भक्ति की प्रेरणा और मन को सांत्वना उनकी बाणी के प्रमुख गुण हैं। इन्हीं के द्वारा इन्होंने ईश्वर की

*१६३, आदर्श नगर, ओल्ड कैंट रोड, फरीदकोट-१५१२०३, मो ९९१५७-०२८४३

भक्ति और ईश्वर के लक्षणों का विवेचन भी किया है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब की आध्यात्मिक चिंतनधारा में ज्ञान-मिश्रित भक्ति-योग की प्रधानता है। उनका भक्ति-योग विरति, विवेक और ज्ञान की सुदृढ़ नींव पर निर्मित है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने परंपरा पर आधारित वैराग्य को नहीं अपनाया है। उन्होंने वैराग्य का अर्थ पलायन नहीं लिया है और न ही उनका अभिप्राय एषणाओं का परित्याग है। उन्होंने वैराग्य को निवृत्ति मार्ग नहीं माना है। वास्तव में विरक्ति आसक्ति का विपरीतार्थक है और इसका अभिप्राय भोगदान का विपरीतार्थक है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के अनुसार वैराग्य में एषणाओं से निवृत्ति तो होती है लेकिन साथ ही प्रवृत्ति-मूलक भी है। वैराग्य का अर्थ है-- इच्छाओं की निवृत्ति और धर्माचरण में प्रवृत्ति। इसी सिद्धांत को लेकर श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने अपनी बाणी में वैराग्य का निरूपण बड़ी तन्मयता से किया है। उन्होंने वैराग्य को कर्म-क्षेत्र से पलायन न मानते हुए फरमाया है :

काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥
(पन्ना ६८४)

श्री गुरु तेग बहादर साहिब के वैराग्य में ही मानव समाज का स्वर निहित है। आत्म-बलिदान और सेवा सिक्ख धर्म के दो आधारभूत तत्त्वों को गुरु जी ने अपने जीवन में पुष्प-गंध के समान धारण किया और सतपुरुष को पहचानने की भरपूर कोशिश की। उन्होंने स्पष्ट कहा कि जगत की रचना मिथ्या है। इस सत्य का साक्षात्कार करने वाला ही सच्चा ज्ञानी है। संसार के सब पदार्थ, सब सम्बंध, सब तृष्णायें, सब इच्छाएं नश्वर हैं। काम, क्रोध, अहं सब कुछ जल की बूंद की भांति महत्त्वहीन है। गुरु साहिब ने संसार की असारता का परिचय इस प्रकार दिया है :

जग रचना सब झूठ है जानि लेहु रे मीत ॥
कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीति ॥
(पन्ना १४२९)

उन्होंने इस संसार से अनासक्त रहते हुए अविनाशी तत्त्व की खोज करने में बल दिया है और अत्यंत सरलतम मार्ग सुझाया है। केवल अपना आप पहचानने से ही अविनाशी और चिरंतन सत्य रूपी ईश्वर को 'पानी संग पानी' के समान प्राप्त किया जा सकता है। जो व्यक्ति इस स्थिति को पा लेता है वह ब्रह्मज्ञानी हो जाता है। इसे ही श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने निर्भय पद कहा है। इसके लिए गुरु जी ने एक कसौटी बताई है :

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ॥
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै ॥ *(पन्ना ६३३)*

जो पुरुष हर्ष, शोक से सर्वथा परे हो चुके हैं, उन्होंने संसार के परम तत्त्व को जान लिया है, लेकिन यह स्थिति इतनी सरल नहीं है। इसके लिए माया, मोह, अहं आदि विकार बाधक हैं जो मानव को उसके मोक्ष-पद से अलग करते हैं और ईश्वर को पाने में बाधक बनते हैं। गुरु जी ने मोक्ष-प्राप्ति हेतु मोक्ष की अवस्थाओं को अपनी बाणी में परिलक्षित करके मन की प्रबलता और चंचलता का चित्रण कर उसका मार्गदर्शन किया है। उसे भय और लोभ द्वारा संसार की नश्वरता दिखाकर, उसमें वैराग्य-भाव भरकर साधसंगत, गुरु-भक्ति एवं ईश्वर-स्मरण के लिए प्रेरित किया है। वास्तव में ईश्वर-प्राप्ति ही शाश्वत अभय या निर्भय पद है। इसके मिलने पर पुरुष न किसी से डरता है, न किसी

को डराता है। इसी अवस्था को श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने ज्ञान की स्थिति कहा है :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥
(पन्ना १४२७)

इसे ही गुरबाणी में मुक्त अवस्था, बह्मज्ञानी आदि संज्ञाओं से अभिहित किया गया है। इसे ही भारतीय परंपरा में भक्ति, मोक्ष अथवा परमपद कहा गया है। मोह-माया से निवृत्ति एवं धर्माचरण में प्रवत्ति श्री गुरु तेग बहादर साहिब के वैराग्य के विशिष्ट लक्षण हैं।

देखा जाए तो यही वैराग्य का वास्तविक रूप है। वैराग्य वास्तव में जीवन अथवा संसार से पलायन नहीं है। इसका चरम लक्षण एवं आदर्श ईश्वर से तादातम्य स्थापित करना होता है। श्री गुरु नानक देव जी ने भी इसी प्रकार के वैराग्य को धारण किया था और इसी के महत्त्व का निरूपण किया था। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने भी वन में जाकर ईश्वर को खोजने का स्पष्ट शब्दों में खंडन किया है और इस बात पर बल दिया है कि संसार में कमलवत् अलिप्त-भाव से रहना चाहिए तथा अंतर में स्थित पारब्रह्म परमेश्वर के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिए :

पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई ॥
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥
(पन्ना ६८४)

ईश्वर-मिलन में सबसे बड़ी बाधक हउमै को माना गया है। क्षणिक सांसारिक सुख मानव को माया में लिप्त होने में बाध्य करते हैं। सांसारिक सुखों से निवृत्ति के लिए माया-मोह के मिथ्यात्व का अवबोधन कराना पड़ता है, तभी उसके प्रति अनासक्ति होगी और धर्माचरण में प्रवृत्ति बढ़ेगी। धर्माचरण जितना दृढ़ बन जाएगा संसार के प्रति विरक्ति-भाव भी उतना दृढ़ होता जाएगा। मिथ्यात्व का ज्ञान होने पर ही उसके प्रति अनासक्ति-भाव उत्पन्न होता है। ज्ञान के बिना वैराग्य दृढ़ नहीं होता। इसके लिए सबसे बड़ा कारण यह नाना रूपात्मक जगत है जो हमारी अनेक वासनाओं को तुष्ट करता है। अत: सर्वप्रथम इस बात का बोध होना अनिवार्य है कि संसार स्वप्नवत् है और सर्वत्र माया का प्रसार है, केवल प्रभु ही पूर्ण है। जीव इस जगत की माया में लिपटा हुआ व्यर्थ जीवन नष्ट कर रहा है। नि:संदेह इसमें लिप्त रहना उचित नहीं। सत्य तो केवल परमात्मा का नाम है। मूर्ख व्यक्ति सत्य को नहीं समझता, इसी लिए उसमें लिप्त रहता है और भटकता है। गुरमुख इस वास्तविकता को पहचान कर, उससे विरक्त होकर परमात्मा से प्रीति करता है, भवसागर से पार उतरता है और तब वह अनायास ही कह उठता है :

जगत मै झूठी देखी प्रीति ॥
अपने ही सुख सिउ सभ लागे किआ दारा किआ मीत ॥
(पन्ना ५३६)

उसे सभी सम्बंध, यहां तक कि अपना शरीर भी तुच्छ दिखाई पड़ता है। गुरु जी ने कह दिया कि यह शरीर नश्वर है। इससे मोह करना व्यर्थ है। मनुष्य को इस शरीर की सुंदरता व शक्ति पर गर्व होता है, अपने वैभव एवं परिवार पर अभिमान होता है, इसी कारण वह ईश्वर का स्मरण नहीं कर पाता। शरीर के छूटने पर कुछ भी साथ नहीं जाएगा, अत: इनमें आसक्ति रखना व्यर्थ है। उनका कहना है :

--जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि ॥

नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ॥
(पन्ना १४२९)
--धनु धरनी अरु संपति सगरी जो मानिओ अपनाई ॥
तन छूटै कछु संगि न चालै कहा ताहि लपटाई ॥
(पन्ना १२३१)

यहां तक कि गुरु जी ने मनुष्य को मृत्यु का भय दिखाकर सांसारिक मोह-माया से विरक्त रहने का संदेश दिया। इसी भय से उन्होंने ईश्वर-स्मरण को एक महत्त्वपूर्ण साधन बताया है। भगवान के भजन के बिना स्वप्न में भी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। सांसारिक प्रलोभनों के प्रति अनासक्ति से ही विमल वैराग्य का उदय होता है। यह वैराग्य ही सांसारिक विकारों से निवृत्ति और धर्माचरण की प्रवृत्ति का मार्ग है। इस प्रकार के विमल वैराग्य को धारण करने वाला व्यक्ति ही प्रभु को पा सकता है। वास्तव में वही सुखी है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी में वैराग्य-भावना के दो महत्त्वपूर्ण पक्ष परिलक्षित होते हैं-- प्रभु-महिमा (नाम-महिमा) एवं सतसंगति की महिमा। नि:संदेह वैराग्य का नया दृष्टिकोण उनकी अनुभूति और उनकी उदार दृष्टि का परिचायक है। उनके लिए वैराग्य निष्क्रियता अथवा पलायन नहीं है और न ही निराशा अथवा उदासीनता का परिचायक है। वह विशुद्ध धर्माचरण की सतत् प्रेरणा है। 

सिध गोसटि बाणी का साहित्यिक मूल्यांकन

(पृष्ठ १० का शेष)

श्री गुरु नानक देव जी और नाद अभेद हैं, क्योंकि श्री गुरु नानक देव जी की बाणी ने संगीत रूपी सीढ़ी के माध्यम से हर प्राणी के लिए परम पुरख तक पहुंचने का सरल व सहज मार्ग बना दिया।

स्पष्ट है कि श्री गुरु नानक देव जी महान दार्शनिक, चिंतक एवं समाज-सुधारक होने के साथ-साथ उच्च कोटि के बाणीकार थे। उनकी बाणी सिध गोसटि का अनुभूति (भाव) पक्ष उदात एवं भव्य है। अभिव्यक्ति (कला) पक्ष भी साहित्य की कसौटी पर खरा उतरता है। सिध गोसटि बाणी में मुख्यत: भक्ति एवं शांत रस की पावन सरिता प्रवाहित हुई है। गुरुदेव का मूल उद्देश्य प्रचलित रूढ़ियों, आडंबरों एवं कुरीतियों से निजात दिलाकर जन-जन को ईश्वर से जोड़ना था। उनकी बाणी में विद्वता, मधुरता, स्पष्टता, लोकमंगल की भावना के सर्वत्र दर्शन होते हैं। उनकी बाणी वर्तमान में भी स्वार्थी एवं दंभी लोगों को पुरुषार्थ हेतु प्रेरित करती है। उन्होंने मध्य युग में ज्ञानाभिमानी सिधों को गृहस्थ धर्म में रहते हुए परोपकारी जीवन-यापन करने के लिए अत्यंत सहजता से विचार-विमर्श द्वारा प्रेरित किया। 

महान शहीद भाई सती दास जी

*-सिमरजीत सिंघ**

भट्ट वहियों व पांडा वहियों के अनुसार भाई मती दास जी, भाई सती दास जी तथा भाई जती दास जी तीन भाई थे। भाई मती दास जी दरबारी दीवान थे तथा भाई सती दास जी घरबारी दीवान। भाई सती दास जी फारसी भाषा के अच्छे लिखारी थे जो गुरु जी का लिखने-पढ़ने का कार्य करते थे। हुकमनामों की लिखाई तथा पांडा वहियों की लिखित मिलाकर यह निष्कर्ष निकालना कठिन नहीं है कि ज्यादातर चिट्ठी-पत्र भाई सती दास जी ही करते रहे। इन्होंने सतिगुरु जी की बाणी को संभालने का भी प्रयत्न किया, जैसा कि भाई केसर सिंघ लिखता है :

बाणी जो साहिब करन उचार।
सो सतीदास नित करे फ़ारसी अक्खरां विच उतार।
नित साहिब बाणी उचारदे जाण।
ते सतीदास लिख लिख रखण अमान।
बाणी बहुत आही सतीदास पासि लिखी होई
तुरकां ने खोह लीती सोई ॥९७॥

(बंसावलीनामा, नौवां चरण)

महीयुद्दीन औरंगज़ेब आलमगीर सन् १६५८ ई में भारत का बादशाह बना। औरंगज़ेब का चरित्र दो-मुखिया था। एक तरफ लिखा मिलता है कि वह अपने धर्म का पक्का धारणी तथा कट्टर था। वह अपने जीवन का हर पल इसलामी शरीअत मुताबिक गुज़ारता था। सरकारी खज़ाने से वह अपने लिए बहुत कम खर्च करता था। वह ऐशप्रस्त नहीं था, फ़जूल खर्च के भी सख़्त विरुद्ध था। दूसरी तरफ वह बहुत बड़ा ज़ालिम व आशंकाग्रस्त स्वभाव का मालिक था। वह इतना आशंकाग्रस्त था कि अपने पुत्रों पर भी विश्वास नहीं करता था। उसने अपने भाइयों व भतीजों को भी कत्ल कर दिया। औरंगज़ेब सुन्नी मुसलमान था तथा अपने ख़्यालों में बहुत कट्टर था। उसके मन में किसी के लिए कोई दया- भावना न थी। उसने सरमद जैसे सुप्रसिद्ध सूफी फकीरों को कत्ल करवा दिया था। उसने बड़े भाई दारा शिकोह को कैद कर, उसको फटे-पुराने भिखारियों जैसे कपड़े पहनाकर, हाथी पर बैठाकर सारे शहर में घुमाया। बाद में उसका सर काटकर, शहर की हर दुकान पर घुमाकर कौड़ियां उगराही गयीं और अंत में ईद के दिन तोहफे के रूप में यह सर अपने पिता को पेश कर दिया। औरंगज़ेब के ऐसे कामों का साधारण लोगों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। यहां तक कि इसके विरोध में फारस के हुक्मरान शाह अबास ने भारत पर हमला करने की धमकी भी दी। औरंगज़ेब ने अपने आपको सच्चा मुसलमान साबित करने के लिए अपने एक सफीर को मक्के भेजकर, काअबा शरीफ के बड़े मुफती को तोहफा देकर लालच द्वारा अपने वश में करना चाहा, परंतु मुफ्ती ने सफीर को मिलना ठीक न समझा।

औरंगज़ेब ने खुद को सच्चा मुसलमान साबित करने के लिए गैर-मुसलमानों को मुसलमान बनाने का काम शुरू कर दिया। गैर-मुसलमानों के धार्मिक स्थान ध्वस्त करने का एलान कर दिया। गैर-मुसलमानों पर जज़िया टैक्स लगा दिया। एक बार बड़ी संख्या में हिंदू इकट्ठा होकर जज़िया मुआफ करवाने के लिए दिल्ली

**संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।*

गए। औरंगज़ेब ने जुम्मे की नमाज़ पढ़ने के लिए जामा मसजिद में जाना था। किले व मसजिद के रास्ते में हिंदू फरियाद करने के लिए खड़े हो गए। औरंगज़ेब ने फरियाद सुनने की बजाए उन पर मस्त हाथी छुड़वा दिए जिसके परिणामस्वरूप वे सारे हिंदू हाथियों के पांवों तले आकर मर गए।

हिंदुओं को जबरन मुसलमान बनाने की मुहिम को औरंगज़ेब ने और तीक्ष्ण कर दिया। काज़ियों-मौलानों को गैर-मुसलमानों पर जुल्म करने के अधिकार दे दिये गए। कश्मीर के इलाके में बहुत सारे विद्वान पंडितों की रिहायश थी। उन पर ज्यादा सख़्ती कर दी गयी। कश्मीर को उस समय हिंदू सभ्यता का घर समझा जाता था। औरंगज़ेब इन विद्वानों को मुसलमान प्रचारकों में तबदील करना चाहता था। औरंगज़ेब ने कश्मीर के हिंदुओं पर ज्यादा सख़्ती करने के लिए शेर अफगान खां को कश्मीर का हाकिम स्थापित किया।

शेर अफगान खां ने कश्मीर के हिंदुओं को छ: महीने का समय देकर सबको मुसलमान धर्म धारण करने की ताड़ना या ताकीद कर दी। कश्मीरी पंडितों के सामने नयी समस्या मुंह आड़े खड़ी हो गयी। पंडितों में निराशा की लहर फैल गयी। कुछ सूझवान पंडितों को नयी तजवीज़ सूझी और उन्होंने श्री गुरु नानक देव जी की गद्दी के मालिक श्री गुरु तेग बहादर साहिब, श्री अनंदपुर साहिब निवास कर रहे थे, की शरण में जाने की सोची। दिल हार चुके पंडितों को यह बात जंच गयी तथा कश्मीर के प्रमुख पंडित इकट्ठे होकर श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शरण में श्री अनंदपुर साहिब में आ गए। दुखी पंडितों की फरियाद सुनकर गुरु जी सोचने लगे कि ज़िंदगी के सिद्धांत पर पहरा देने का समय आ गया है। गुरु जी के योग्य सुपुत्र बाल गोबिंद राय जी ने भी गुरु-पिता जी को इसके लिए प्रेरित किया। अत: इस बेइन्साफी के विरुद्ध गुरु जी ने बड़ी से बड़ी कुर्बानी देने का मन बना लिया। गुरु जी ने पंडितों को भरोसा दिया कि आप अपने हाकिम को जाकर कह दें कि अगर वह श्री गुरु तेग बहादर जी को मुसलमान बना लेगा तो वे खुद-ब-खुद मुसलमान बन जाएंगे।

शेर अफगान ने सभी पंडितों से इस भावार्थ का एक पत्र लिखवा लिया और उस पर अपनी राय लिखकर बादशाह की तरफ दिल्ली भेज दी। बादशाह औरंगज़ेब ने शेर अफगान को हुक्म दिया कि हिंदुओं पर फिलहाल सख़्ती बंद करके गुरु जी को मुसलमान बनाया जाए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब अन्याय के विरुद्ध प्रचार करते हुए बलिदान देने के लिए चल पड़े। इतिहासकारों का मत है कि गुरु जी को मुगल सरकार ने दो बार गिरफ्तार किया। पहली बार १७२२ बिक्रमी कार्तिक सुदी एकादशी को गिरफ्तार किया गया। इस सम्बंध में "गुरू कीआं साखीआं" कर्ता भाई सरूप सिंघ कौशिश लिखता है कि :

एक सिक्ख भंना भंना गुरू जी के पास आइआ, इस ने हाथ बांध बेनती की, महाराज! तुरक चौंकी यहां से नेड़े है, चले जाना चाहिए। गुरू जी ने कहा, भाई सिक्खा! करतार को जो भावे सभ किछ उस राज़क की रजाइ में होइ रहा है। इतनें अरसा में चौंकी का सरदार कूंए ते आइ गिआ। गुरू जी को देख बोला, जिसे हम खोजते थे, उसे पाइ लीआ है। सरदार ने घोड़े से उतर के कहा, पीर जी! तुमें दिहली में बादशाह ने बुलाइआ है, तिआरी करीए। इह देख सिक्खां का धीरज छूट गिआ, गुरू जी ने सब से धीरज दई। बचन होआ भाई सिक्खो! भाणा अमिट है, मिट नहीं सकता, देखो उह करता किआ करता है, उस के रंग निआरे हैं। इतना कहि के घोड़ी ते असवार होइ चौंकी सरदार के

गैल दिहली को आए। गुरू जी के गैल मतीदास, सतीदास, दगो, दिआलदास, संगता होर सिक्ख साध पकड़े आए। बादशाह ने गुरू जी को कत्ल करने का हुकम दिआ। कंवर राम सिंघ 'कछुहारा' ने ऐसा करने से रोका। बादशाह ने कंवर राम सिंघ की तरफ देखा, इन्हें इस की मिसल में सतिगुरां को मतीदास आदि साथिओं समेत नज़रबंद कर दिया। गुरु जी का बंदीवान होना सुण के दीवान दरघा मल्ल ते चउपराइ आदि सिक्ख दिहली में रसीना नगरी आए। राणी पुषपा देवी ने इनके आए का बड़ा सतिकार किआ, रहिने के लीए इकांत थांइ दई। दीवान दरघा मल्ल ने राणी से पूछा कि गुरू जी का किआ हाल है। आगे से राणी ने इन्है धीरज दई, कहा--गुरू जी जलदी बंदी खाने से बाहर आ जाइंगे। संमत सतरां से साईस क्रिशना पक्खे पोख मास की पंचमी को गुरू जी दो मास तीन दिंहु बंदीवान रहि बंदीखाने से बाहर राणी पुषपा देवी के ग्रहि में आइ गए।

कश्मीरी पंडितों की दुख भरी दासतान पर गहरी विचार करने के बाद गुरु जी ने दिल्ली जाकर बादशाह को समझाने का मन बना लिया। गुरु जी अपने साथ भाई मती दास जी, भाई सती दास जी, भाई दिआल दास जी तथा कुछ अन्य सिक्खों को लेकर रास्ते में प्रचार करते हुए दिल्ली की ओर चल पड़े। दिल्ली को जाते हुए रास्ते में दूसरी बार १२ सावन, १७३२ बिक्रमी को गुरु जी को मलकपुरे रोपड़ के पास गिरफ्तार करके दिल्ली ले जाया गया। इस समय इनके साथ भाई सती दास जी तथा भाई मती दास जी तथा अन्य सिक्खों को भी गिरफ्तार किया गया। इस सम्बंध में भाई केसर सिंघ छिब्बर ने रोपड़ के पास गिरफ्तारी की घटना का वर्णन करते हुए लिखा है कि सतिगुरु जी ने पानी पीना चाहा। पास ही कुआं था तो भाई मती दास जी दौड़कर गए और पानी भर लाए। जब रोपड़ की पुलिस आई तो इनको गिरफ्तार करके ले गयी। इसका ज़िक्र भट्ट वहियों में मिलता है। भट्ट वही जादो बंसीआं के अनुसार :

गुरू तेग बहादर जी महल नावै को नगर धमधाण परगणां बांगर से आलम ख़ान रुहेला शाही हुकम गेल दिल्ली को ले कर आइआ, सात सत्रह से बाईस कातक सदी गिआरस को बुधवार के दिहुं, साथ मतीदास, सतीदास बेटा हीरामल्ल छिब्बर के, संगत बेटा बिल्ले उपल का, जेठा, दिआलदास बेटे माईदास के जलहाने बलउत, होर सिक्ख फकीर आए।

भट्ट वही पूरबी दक्खणी के अनुसार :

गुरू तेग बहादर जी महल नावे को नूर मुंहमद खान मिरज़ा चौकी रोपड़ वाले साल सत्रा सै बतीस सावण प्रविषठे बारां केदिहू, गाउं मलकपुर रंघड़ां परगना घनोला से पकड़ के सरहंद पहुंचाइआ। गैलहूं दीवान मतीदास, सतीदास--बेटे हीरा मल्ल छिब्बर के, दिआलदास बेटा माईदास, बलउंत का पकड़िआ आइआ। गुरू जी चार मास बसी पठाणां के बंदीखाने में बंद रहे। अट्ठ दिवस कुतवाली में बंद रहे।

उपरोक्त हवालों से अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि भाई मती दास जी तथा भाई सती दास जी श्री गुरु तेग बहादर साहिब के गुरिआई काल में ज्यादा समय गुरु जी के साथ रहे। दिल्ली में गुरु जी को एक सूनी हवेली में बंद करके रखा गया। औरंगज़ेब यह दर्शाना चाहता था कि गुरु जी को पता चल जाए कि उनके साथ सख़्ती वाला व्यवहार हो सकता है। गुरु जी को औरंगज़ेब के दरबार में ले जाया गया। औरंगज़ेब ने अपनी नीतियों के अनुसार गुरु जी को मुमलमानी धर्म धारण करने के लिए कहा। गुरु जी ने अपने विचारों द्वारा उसकी मंशा पर पानी फेर दिया। औरंगज़ेब गुरु जी को हर हाल में मुसलमान धर्म धारण करवाना चाहता था,

क्योंकि ऐसा करने से कश्मीर के सारे पंडित मुसलमान बन जाने थे। जब गुरु जी अपने धर्म पर डटे रहे तो औरंगज़ेब ने गुस्से में आकर गुरु जी के समक्ष तीन शर्तें रख दीं, प्रथम-- इसलाम धर्म कबूल करो, द्वितीय-- कोई करामात दिखाओ, तृतीय-- मृत्यु के लिए तैयार हो जाओ। गुरु जी ने पहली दोनों शर्तें ठुकरा दीं और शहीदी देने के लिए तैयार हो गए।

इसके बाद गुरु जी पर और सख़्ती का दौर शुरू हो गया। गुरु जी को जेल में बंद किया गया तथा उनके मन में डर पैदा करने के लिए चांदनी चौक में उनकी आंखों के सामने उनके सिक्खों-- भाई मती दास जी को आरे से चीरकर शहीद कर दिया गया, भाई दिआला जी को पानी की देग में उबालकर शहीद कर दिया गया तथा भाई सती दास जी को रुई में लपेटकर आग लगाकर शहीद कर दिया गया। इस सम्बंध में भट्ट वही तलऊंडा, परगणा जींद का कर्ता लिखता है :

'दिआल दास बेटा भाई दास का, पोता बल्लू राउ का, पड़ोपोता मूल चंद का, बंस बीझे का, भरदुआसी गोत पुआरां, . . . गुरु तेग बहादर गैल हूं साल सत्रह से बतीस मगसर सुदी पंचमी वीखार के दिहुं दिली चांदनी चउंक के मलहान, शाही हुकम गैल मारा गया। साथ मतीदास, सतीदास बेटे हीरा मल्ल के पोते दवारकादास ते भारगव गोत छिब्बर ब्राहमण मारे गए।

गुरु जी प्रभु की रजा में खुश थे। गुरु जी के आदेश के अनुसार भाई मती दास जी ने भी ऐसा ही किया। जपु जी साहिब का पाठ करते हुए तन कटवा लिया परंतु सिदक (धैर्य) को ज़रा भी आंच न आने दी। भाई संतोख सिंघ जी ने लिखा है :

मतीदास को कीनि बुलावनि।
दुइ तखते महिं करयो बंधावन।
हुकम जलादनि तबहि उचारा।
लै आरा सिर पर तिस धारा ॥४५॥
अरधो अरध चिराइ सु डारा।
परयो प्रिथी पर ह्वै दो फारा।
दोनहुं तन ते जपुजी पढै।
हेरति सभि के अचरज बढै ॥४६॥
होइ दुखंड न जीवति कोई।
इह तो पठति जियति जिम होई।
भोग पाइ कर दोनहुं तन ते।
गुरपुरि पहुंचयो प्रेमी मन ते ॥४७॥

(गुर प्रताप सूरज, रास १२, अंसू ४४, पन्ना ४४३२)

मुगल सरकार द्वारा भाई सती दास जी को रुई में लपेटकर ज़िंदा जला दिया गया। "गुरू कीआं साखीआं" में इस घटना का ज़िक्र करते हुए लिखा गया है :

गुरू जी को कोतवाली से बाहर बरोटे के नीचे लिआंदा गिआ, तीनों सिक्ख इन के गैल आए। शाही काजी ने प्रिथमे इन तीनो सिखों को फतवा दीआ, कहा--इन तीनों एस के साथी एस के साहवें मार दीए जाएं। अगर फिर भी ना माना तां इसे वी अगले जहनम तोर दीआ जाए। अव्वल दिआल दास को रीझते देगे में बंद कर मारा। इस के बाद मतीदास को आरे गैल चीरा गिआ। उपरांत गुरू जी के तीजे साथी को रूई वल्हेट जिंदा जलाइ दीआ। इन तीनों सिक्खों की शहादत गुरू जी ने आंखों से देखी। बचन होआ, 'धंन सिक्खी धंन सिक्खी . . .।

इन घटनायों का लक्ष्य गुरु साहिब जी को भयभीत करके उनको अपने आदर्शों से भटकाना था, किंतु वे अचल व अडोल रहे और गुरु के सिक्ख भी निर्भय होकर जानें कुर्बान करते गए, किसी ने उफ़ तक न की। धन्य है सतिगुरु और धन्य सतिगुरु के सच्चे सिक्ख! जिन्होंने अंतिम समय तक सिक्खी सिदक निभाया तथा सिक्ख लहर को कुर्बानी का शाह रास्ता दिखाया।



भाई लक्खी शाह

-डॉ. अमृत कौर*

झोपड़ी धू-धू कर जल रही थी। लपटें निकल रही थीं। सम्पूर्ण आयु तिनका-तिनका जोड़कर बनाया आशियाना, भाई लक्खी शाह के जीवन का आश्रय-स्थल उनके व उनके परिवार के सम्मुख भस्म हो रहा था। वे दहाड़ रहे थे, बचाओ-बचाओ का शोर मचा रहे थे, परंतु अपनी झोपड़ी को आग की लपटों से बचाने का कोई प्रयास नहीं कर रहे थे।

वे संतुष्ट थे कि वाहिगुरु की कृपा से वे श्री गुरु तेग बहादर साहिब का धड़ सही-सलामत उठाकर लाने व उसका दाह-संस्कार करने में सफल हो गए हैं। गुरु जी की पवित्र मृत देह से मुगल खिलवाड़ करें, कोई अपवित्र हाथ उनकी पावन देह को स्पर्श करे, यह उन्हें सहनीय नहीं था। लोगों के मन में दहशत फैलाने के विचार से तत्कालीन मुगल हकूमत ने निर्णय किया कि गुरु जी के पावन शरीर के चार टुकड़े कर राजधानी दिल्ली के चार प्रमुख दरवाजों-- दिल्ली, अजमेरी, लाहौरी और कशमीरी पर लटका दिए जाएंगे। भाई जैता जी, भाई ऊदा जी, भाई लक्खी शाह, भाई नानू और भाई मक्खण शाह ने गुरु जी की पावन देह को संभालने की योजना बनायी। इन सबकी सहायता से भाई लक्खी शाह गुरु जी का मृत धड़ उठाने में सफल हो गये और अपनी बैलगाड़ी में रख कर . . . वो गये . . . वो गये . . . ।

भाई लक्खी शाह ने गुरु जी के पावन शरीर को साफ-सुथरे कपड़े में लपेटकर, अपनी झोपड़ी के अंदर रखकर फटाफट उसे आग लगा दी। लोक-दिखावे के लिए वे बचाओ-बचाओ की आवाजें लगाने लगे। जो भीतरी आनंद और सकून भाई लक्खी शाह को प्राप्त हो रहा था वह अनमोल था। इस सेवा और त्याग के द्वारा उनका नाम सदा-सदा के लिए इतिहास के पन्नों में स्वर्णिम अक्षरों में लिखा गया है। वे (दुनियावी) सब कुछ लुटाकर रूहानी दौलत से मालामाल हो गए थे। आज भी नई दिल्ली में स्थित गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब गुरु जी के साथ-साथ भाई लक्खी शाह और उनके परिवार के साहस की गाथा सुना रहा है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब को अपने धर्म-पथ से विचलित करने के लिए औरंगज़ेब द्वारा अनेक प्रलोभन और यातनाएं दी गईं। उन्हें और उनके सभी सिक्खों को चालीस दिन तक जंज़ीरों में जकड़कर तहखाने में रखा गया। गुरु जी को लोहे के पिंजरे में कैद कर रखा गया। उनके साथ कैद भाई दिआला जी को उनके सामने गर्म पानी की देग में उबालकर शहीद कर दिया गया। भाई मतीदास जी के शरीर को आरे से चीरकर दो टुकड़े कर शहीद कर दिया गया। भाई सतीदास जी को रूई में लपेटकर ज़िंदा जला शहीद कर दिया गया। दानवता खिलखिलाकर हंस दी। मानवता सिसक उठी। शांति के पुंज श्री गुरु तेग बहादर साहिब अडोल अवस्था में बैठे प्रभु-नाम में तल्लीन

(शेष पृष्ठ २८ पर)

*****१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, ज़ीरकपुर-१४०६०४ (मोहाली), मो. :९८१५१-०९९५७

सहज साधना के पुरोधा : भक्त नामदेव जी

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल**

भक्ति आंदोलन को स्वरूप प्रदान करने में जिन संतों-भक्तों ने विशेष भूमिका निभाई, उनमें भक्त नामदेव जी का नाम अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह भक्त नामदेव जी की मानवतावादी दृष्टि ही थी जिसके कारण गुरु साहिबान ने आपकी पवित्र बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल किया। इसमें आपके ६१ पद सम्मिलित हैं जो १८ रागों में दर्ज हैं।

जीवन-यात्रा : परंपरा और ज्ञात स्रोतों के आधार पर यह स्वीकार किया जाता है कि भक्त नामदेव जी का जन्म महाराष्ट्र राज्य के सतारा ज़िले के नरसी बामनी गांव में संवत् १३२७ बिक्रमी अर्थात् सन् १२७० ई में हुआ। आपके पिता का नाम श्री राम शेटी और माता का नाम श्रीमती गोनाबाई था। मात्र ८ वर्ष की आयु में आपका विवाह श्री गोविंद शेटी की सुपुत्री माता राजबाई के साथ हुआ। आपके घर पांच संतानों ने जन्म लिया। नारायण, महादेव, गोविंद और विट्ठल आपके चार सुपुत्र थे। आपकी एक सुपुत्री भी थी जिसका नाम लिंबा बाई था।

भरे-पूरे परिवार वाले भक्त नामदेव जी अपने सांसारिक कर्त्तव्यों को निभाते हुए भी आध्यात्मिकता की ओर आकर्षित रहे। आप वारकरी संप्रदाय से संबंधित माने जाते हैं जिसकी स्थापना आपके गुरु-भाई संत ज्ञानेश्वर जी ने की थी। आप जी और संत ज्ञानेश्वर जी संत विसोबा खेचर के शिष्य थे। विट्ठल (परमात्मा) की उपासना में भक्त नामदेव जी ने मराठी भाषा में अनेक अभंगों की रचना की है।

वैसे तो भक्त नामदेव जी की कार्य-स्थली महाराष्ट्र का नगर पंढरपुर था परंतु आप अपने गुरु-भाई और मित्र संत ज्ञानेश्वर जी के साथ संपूर्ण भारत का देशाटन करते रहे। कुछ समय पश्चात् संत ज्ञानेश्वर जी का देहांत हो गया। इससे आपका मन ऐसा उचाट हुआ कि आप पंढरपुर में और अधिक न रह सके। आप पंजाब आ गए और कई स्थानों का भ्रमण करने के पश्चात् आपने घुमाण नामक गांव (जिला गुरदासपुर) को अपने निवास के लिए चुना। मान्यता है कि भक्त नामदेव जी घुमाण में १८ वर्ष तक रहे।

सन् १३५० ई में अस्सी वर्ष की आयु पूरी करके आप परमात्मा के चरणों में जा बिराजे।

सहज साधना : गुरमति में भक्ति के सहज रूप को स्वीकार किया गया। यहां किसी भी प्रकार के अनुष्ठान, आयोजन, प्रबंध आदि करने की कोई आवश्यकता नहीं बताई गई। सहज भाव से हरि के नाम का सिमरन करना है और हरि से ही प्रेम करना है। मुक्ति प्राप्त करने के लिए बस, इतना ही काफ़ी है। संतों-भक्तों ने इसे सहज साधना कहा है।

भक्त नामदेव जी सहज साधना को ही उचित एवं श्रेष्ठ मानते हैं। सहज साधना की पुष्टि के संबंध में आपका एक प्रसंग भक्त

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१*

कबीर जी की जुबानी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है। इस प्रसंग में आपके मित्र भक्त त्रिलोचन जी आप से पूछते हैं कि मित्र! तू माया-मोह में पड़ा काम करता रहता है, प्रभु में चित्त क्यों नहीं लगाता?

नामा माइआ मोहिआ कहै तिलोचनु मीत ॥
काहे छीपहु छाइलै राम न लावहु चीतु ॥
(पन्ना १३७५)

उत्तर में भक्त नामदेव जी कहते हैं कि मैं सारे काम हाथ-पैर से करता हूं, परंतु चित्त राम से जोड़ रखा है :

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामि संम्हालि ॥
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि ॥
(पन्ना १३७५)

इस प्रकार भक्त नामदेव जी सहज साधना का अत्यंत स्पष्ट रूप सामने रखते हैं। मनुष्य को अपने सांसारिक क्रिया-कलाप करते रहना है, परंतु हृदय सदा अकाल पुरख से जुड़ा रहे, ध्यान हमेशा प्रभु में लगा रहे। वास्तव में सहज साधना कुछ ऐसी है जैसे कोई बालक मेला तो देखे लेकिन पिता की उंगली पकड़कर।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना ९७२ पर भक्त नामदेव जी ने बहुत सुंदर और सटीक उदाहरण देते हुए सहज साधना के स्वरूप को स्पष्ट किया है। आपका कथन है :

आनीले कागदु काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले ॥
पंच जना सिउ बात बतऊआ चीतु सु डोरी राखीअले ॥ (पन्ना ९७२)

अर्थात् बालक कागज़ लेकर आते हैं, उसे काटकर पतंग बनाते हैं और फिर उसे आकाश में उड़ाते हैं। पंच जना (दोस्तों-मित्रों) से बातें भी करते रहते हैं, परंतु उनका ध्यान हमेशा पतंग की डोरी पर रहता है।

आनीले कुंभु भराईले ऊदक राज कुआरि पुरंदरीए ॥
हसत बिनोद बीचार करती है चीतु सु गागरि राखीअले ॥ (पन्ना ९७२)

राजकुमारियों जैसी कन्याएं गागर (घड़ा) लेकर आती हैं, पनघट से पानी भरकर ले जाती हैं, रास्ते में हंसती-खेलती हैं, मज़ाक करती हैं, पर उनका ध्यान हमेशा सिर पर रखी गागर में लगा रहता है कि कहीं वह छलक न जाए, गिर न जाये।

मंदरु एकु दुआर दस जा के गऊ चरावन छाडीअले ॥
पांच कोस पर गऊ चरावत चीतु सु बछरा राखीअले ॥ (पन्ना ९७२)

दस दरवाज़े वाले बड़े घर के लोग गऊओं को चरने के लिए भेजते हैं। गऊएं पांच कोस दूर जंगल में चर रही होती हैं, परंतु उनका ध्यान घर में बंधे अपने बछड़े में रहता है।

कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले ॥
अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले ॥ (पन्ना ९७२)

अर्थात् भक्त नामदेव जी कहते हैं कि सुनो त्रिलोचन! घरों में स्त्रियां अपने बालक को पालने में लेटा देती हैं। वे अंदर-बाहर कई काम करती फिरती हैं, लेकिन उनका ध्यान अपने बच्चे में ही लगा रहता है।

इस प्रकार भक्त नामदेव जी समझाते हैं कि हमें दुनिया के सारे कार्य करने हैं परंतु चित्त प्रभु की ओर रखना है।

प्रभु का ध्यान कैसे करना है, उसमें चित्त कैसे लगाना है, इसे भी भक्त नामदेव जी ने बड़े सुंदर प्रतीकों के माध्यम से समझाया है :

जिउ मीना हेरै पसूआरा ॥

सोना गढते हिरै सुनारा ॥
जिउ बिखई हेरै पर नारी ॥
कउडा डारत हिरै जुआरी ॥
नाद भ्रमे जैसे मिरगाए ॥
प्रान तजे वा को धिआनु न जाए ॥
ऐसे रामा ऐसे हेरउ ॥
रामु छोडि चितु अनत न फेरउ ॥ (पन्ना ८७३)

अर्थात् जैसे मछली पकड़ते समय मछुआरे का ध्यान मछली में लगा रहता है; जैसे सोना गढ़ते हुए सुनार का ध्यान सोने में लगा रहता है; जैसे व्यभिचारी व्यक्ति पराई नारी को देखता है; जैसे कौड़ी फेंककर जुआरी कौड़ी को देखता है कि वह जीता या नहीं और जैसे नाद के भ्रम में भटकता मृग प्राण तो गंवा देता है परंतु उस नाद से अपना ध्यान नहीं हटाता, इसी तरह मनुष्य को प्रभु को देखना है, उसमें अपना ध्यान लगाना है, उसमें अपना चित्त लगाना है।

यहां भक्त नामदेव जी एक चेतावनी भी देते चलते हैं कि ध्यान सिर्फ़ राम में लगाना है, राम को छोड़कर किसी और चीज़ में नहीं लगाना है। राम में चित्त लगाने से ही शांति मिलेगी, मुक्ति प्राप्त होगी। अन्य सांसारिक वस्तुओं से लिव लगाई तो कष्ट ही कष्ट हासिल होगा।

भक्त नामदेव जी इस स्थिति का सुंदर खाका खींचते हैं :

जिउ मधु माखी संचै अपार ॥
मधु लीनो मुखि दीनी छारु ॥
गऊ बाछ कउ संचै खीरु ॥
गला बांधि दुहि लेइ अहीरु ॥ (पन्ना १२५२)

भक्त नामदेव जी का कथन है कि मधुमक्खी बड़ी मेहनत करके शहद इकट्ठा करती है, परंतु वह शहद उसके मुंह में छार डालकर उससे छीन लिया जाता है। इसी प्रकार गाय अपने बछड़े के लिए दूध संचित करके रखती है, परंतु अहीर गाय का गला बांधकर सारा दूध दुह लेता है।

भक्त नामदेव जी स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य माया में चित्त लगाए रखता है, माया एकत्र करता है, परंतु यह माया बाद में दुख का कारण बनती है और किसी काम नहीं आती। मनुष्य बहुत परिश्रम करके मोह-ग्रस्त होकर माया एकत्र करता है परंतु अंत में यह माया किसी न किसी कारण के चलते उससे छिन जाती है :

माइआ कारनि स्रमु अति करै ॥
सो माइआ लै गाडै धरै ॥
अति संचै समझै नही मूढ़ ॥
धनु धरती तनु होइ गइओ धूड़ि ॥ (पन्ना १२५२)

इसलिए भक्त नामदेव जी चेताते हैं कि विषयों से लगाव क्यों? प्रभु को छोड़कर विषय-वासनाओं में दिल लगाना खुद को धोखा देना है :

काएं रे मन बिखिआ बन जाइ ॥
भूलौ रे ठगमूरी खाइ ॥रहाउ॥
जैसे मीनु पानी महि रहै ॥
काल जाल की सुधि नही लहै ॥
जिहबा सुआदी लीलित लोह ॥
ऐसे कनिक कामनी बाधिओ मोह ॥(पन्ना १२५२)

जैसे मछली जिह्वा के स्वाद के पीछे लोहे के कांटे को लीलकर फंस जाती है ऐसे ही मनुष्य भी कनक-कामिनी के मोह में बंधकर अपना विनाश करवा लेता है।

भक्त नामदेव जी का आशय स्पष्ट है कि दुनियावी काम अवश्य करो पर उनमें फंसो नहीं। सांसारिक कार्य-व्यवहार निपटाते हुए प्रभु में चित्त लगाए रखो। प्रभु ही मुक्ति-दाता है। अन्य सांसारिक वस्तुएं अंततः दुख का कारण

बनती हैं।

इस प्रकार भक्त नामदेव जी ने सहज साधना के रूप में मनुष्य को मुक्ति का ऐसा दरवाज़ा दिखाया है जिसे प्राप्त करना बेहद आसान है। अपना काम-काज करो पर मन प्रभु में लगाए रहो! प्रभु स्वयं नदरि करके अपने से मिला लेगा।

प्रभु में चित्त लगाओ, पर ऐसे लगाओ जैसे भूखा अनाज में और प्यासा पानी में लगाता है :

जैसी भूखे प्रीति अनाज ॥
त्रिखावंत जल सेती काज ॥
जैसी मूड़ कुटंब पराइण ॥
ऐसी नामे प्रीति नराइण ॥ (पन्ना ११६४)



श्री गुरु नानक देव जी का किरत-सिद्धांत *(पृष्ठ ११ का शेष)*

से किरत करते हुए प्रभु-हुक्म (भय) में रहना है। ऐसा मनुष्य ही परमात्मा के मार्ग का असल मुसाफिर है।

गुरमति का आदर्श है कि गुरु का सिक्ख पराया धन न खाए, रिश्वत न ले, अपनी किरत-कमाई में से दसवंध निकाले, वंड छके, सतसंगत करे। तब मन निर्मल हो जाएगा। जो लोग अपने हाथों से किरत नहीं करते और बेगानी कमाई खाते हैं वे मुर्दे के समान हैं। जैसे मुर्दे के अंगों से लगी हुई किसी वस्तु को कोई नहीं खाता, ऐसे ही निठल्ले व्यक्तियों के हाथों से कुछ नहीं खाना चाहिए।

श्री गुरु नानक देव जी के अनुसार किरत ही जीवन है। निकम्मे आलसी लोग समाज पर कलंक हैं। किरत कोई भी हो, गुरु का सिक्ख किरत ज़रूर करे। ऐसे लोगों का प्रभु-दरबार में जाना निश्चित होता है तथा उनका लोक-परलोक में यश होता है। ऐसे मनुष्य सदैव अमर रहते हैं।



भाई लक्खी शाह *(पृष्ठ २४ का शेष)*

रहे। औरंगज़ेब द्वारा गुरु जी को झुकाने के प्रयास में गुरु जी ने औरंगज़ेब से ललकार कर कहा, "तुम्हारी तलवार तैयार है तो मेरा सिर भी तैयार है। यह सिर कट तो सकता है पर झुक नहीं सकता।" जब गुरु जी किसी तरह भी औरंगज़ेब के सम्मुख सिर झुकाने के लिए तैयार नहीं हुए तो उन्हें चांदनी चौंक के स्थान पर शहीद कर दिया गया :

तिलक जंञू राखा प्रभ ता का ॥
कीनो बडो कलू महि साका ॥
साधन हेति इती जिनि करी ॥
सीसु दीआ परु सी न उचरी ॥ (बचित्र नाटक)

उस समय भारतीय जनता इतनी कायर, निस्तेज और निष्प्राण हो चुकी थी कि इस अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने का साहस किसी में न हुआ। इस अत्याचार को देखकर सारे शहर में हाहाकार मच गई। कहते हैं कि उस समय तेज आंधी (अंधड़) आई। इस आंधी से लोगों में भगदड़ मच गई। इस भगदड़ में आंख बचाकर भाई जैता जी गुरु जी के पावन शीश को उठाकर श्री अनंदपुर साहिब की तरफ चल पड़े तथा भाई लक्खी शाह ने गुरु जी के पावन मृत धड़ को उठा लिया।



भक्त नामदेव जी की बाणी तथा विचारधारा

*-डॉ. परमजीत कौर**

महाराष्ट्र प्रांत के ज़िला सतारा के नरसी नामक गांव में उत्पन्न भक्त नामदेव जी ने अपनी आयु का काफी समय पंडरपुर में व्यतीत किया। बचपन से ही आपकी रुचि परमात्मा के यश-गायन में थी। भक्त नामदेव जी ने संत ज्ञानेश्वर जी के साथी महात्मा विशोभा जी से गुरु-दीक्षा प्राप्त की तथा आध्यात्मिक ज्ञान-प्राप्ति के मार्ग पर चल पड़े। भक्त नामदेव जी के ६१ शबद १८ रागों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है :

गउड़ी राग --१, आसा राग --५, गूजरी राग --२, सोरठि राग --३, धनासरी राग --५, टोडी राग --३, तिलंग राग --२, बिलावलु राग --१, गोंड राग --७, रामकली राग --४, माली गउड़ा राग --३, मारू राग --१, भैरउ राग --१२, बसंतु राग --३, सारंग राग --३, मलार राग --२, कानड़ा राग --१, प्रभाती राग --३

भक्त नामदेव जी ने अपनी बाणी में मूर्ति-पूजा का खंडन किया तथा लोगों को मूर्ति-पूजा की तरफ से हटाकर परमात्मा की आराधना के लिए प्रेरित किया। आपका कथन है :

--एकै पाथर कीजै भाउ ॥
दूजै पाथर धरीऐ पाउ ॥
जे एहु देउ त ओहु भी देवा ॥
कहि नामदेउ हम हरि की सेवा ॥ (पन्ना ५२५)

--आनीले कुंभ भराईले ऊदक ठाकुर कउ इसनानु करउ ॥
बइआलीस लख जी जल महि होते बीठलु भैला काइ करउ ॥ (पन्ना ४८५)

आपने समझाया कि परमात्मा सर्वव्यापक है। उसके स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता :

--एक अनेक बिआपक पूरक जत देखउ तत सोई ॥
माइआ चित्र बचित्र बिमोहित बिरला बूझै कोई ॥१॥
सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंद बिनु नही कोई ॥ (पन्ना ४८५)

--हरि की महिमा किछु कथनु न जाई ॥ (पन्ना ११६४)

जीवात्मा तथा परमात्मा की अभिन्नता का वर्णन करते हुए भक्त नामदेव जी ने समझाया कि परमात्मा प्रत्येक जीव में विद्यमान है। जैसे एक ही मिट्टी से कई तरह के बर्तन बनाये जाते हैं, वैसे ही हाथी से लेकर चींटी तक, निर्जीव पदार्थ तथा सजीव जीव, कीड़े--पतंगे, प्रत्येक घट में परमात्मा समाया हुआ है :

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै ॥
राम बिना को बोलै रे ॥१॥रहाउ ॥
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे ॥
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु

*६२०, गली नं. २, छोटी लाईन, संतपुरा, यमुनानगर- १३५००१ (हरियाणा); मो. ९८१२३-५८१८६

समाना रे ॥ *(पन्ना ९८८)*

भक्त नामदेव जी के अनुसार गुरु द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलना ही जीवन का सही रास्ता है। गुरु की शरण में आने से यह समझ आती है कि वास्तव में मनुष्य का उद्धार स्वयं प्रभु करता है। शास्त्रों में निर्दिष्ट अच्छे कर्म, प्राणायाम आदि का आश्रय लेने पर भी प्रभु की कृपा के बिना उद्धार नहीं होता :

खेचर भूचर तुलसी माला गुर परसादी पाइआ ॥
नामा प्रणवै परम ततु है सतिगुर होइ लखाइआ ॥ *(पन्ना ९७३)*

यदि सच्चा गुरु मिल जाए तो अठारह स्मृतियों के बताये कर्मकांड की आवश्यकता नहीं रह जाती। गुरु मिल जाए तो परमात्मा मिल जाता है :

जउ गुरदेउ त मिलै मुरारि ॥
जउ गुरदेउ त उतरै पारि ॥
जउ गुरदेउ त बैकुंठ तरै ॥
जउ गुरदेउ त जीवत मरै ॥१॥
सति सति सति सति सति गुरदेव ॥
झूठु झूठु झूठु झूठु आन सभ सेव ॥
(पन्ना ११६६)

गुरु से ही प्रभु-नाम-सिमरन की दात प्राप्त होती है। प्रभु-नाम-सिमरन से मनुष्य दिव्य गुणों को प्राप्त कर लेता है, आत्मिक स्थिरता का अनुभव करता है तथा उसकी स्वर्ग (मुक्ति) की लालसा समाप्त हो जाती है :

--सफल जनमु मो कउ गुर कीना ॥
दुख बिसारि सुख अंतरि लीना ॥
(पन्ना ८५७)
--नर ते सुर होइ जात निमख मै सतिगुर बुधि सिखलाई ॥
नर ते उपजि सुरग कउ जीतिओ सो अवखध मै पाई ॥ *(पन्ना ८७३)*

जब प्रभु-नाम-सिमरन करते हुए मन पर प्रभु के नाम का प्रभाव पड़ता है तो माया सम्बंधी विकारों का शोर सुनाई नहीं देता, विकार नष्ट हो जाते हैं, इंद्रियां वश में आ जाती हैं तथा सारे भ्रम दूर हो जाते हैं :

--हरि हरि करत मिटे सभि भरमा ॥
हरि को नामु लै ऊतम धरमा ॥ (पन्ना ८७४)
--दस बैरागनि मोहि बसि कीन्ही पंचहु का मिट नावउ ॥
सतरि दोइ भरे अंम्रित सरि बिखु कउ मारि कढावउ ॥१॥
पाछै बहुरि न आवनु पावउ ॥
अंम्रित बाणी घट ते उचरउ आतम कउ समझावउ ॥ *(पन्ना ६९३)*

तीर्थ, व्रत, दान, यज्ञ आदि नाम-सिमरन की बराबरी नहीं कर सकते। प्रभु के चरणों में जुड़ने से यह विश्वास दृढ़ हो जाता है कि किसी एकादशी आदि व्रत की तथा तीर्थों पर जाने की आवश्यकता नहीं है :

--राम संगि नामदेव जन कउ प्रतगिआ आई ॥
एकादसी ब्रतु रहै काहे कउ तीरथ जाईं ॥
(पन्ना ७१८)
--बानारसी तपु करै उलटि तीरथ मरै अगनि दहै काइआ कलपु कीजै ॥
असुमेध जगु कीजै सोना गरभ दानु दीजै राम नाम सरि तऊ न पूजै ॥ *(पन्ना ९७३)*
--असुमेध जगने ॥ तुला पुरख दाने ॥
प्राग इसनाने ॥१॥
तउ न पुजहि हरि कीरति नामा ॥
(पन्ना ८७३)

भक्त नामदेव जी समझा रहे हैं कि प्रभु के नाम को भूलकर अन्य कार्यों (बातों) में लगी

हुई जीभ व्यर्थ है। यदि मेरी जीभ प्रभु का नाम न जपे तो मैं इसके सौ टुकड़े कर दूं :

रे जिहबा करउ सत खंड ॥
जामि न उचरसि स्री गोबिंद ॥१॥ . . .
मिथिआ जिहबा अवरें काम ॥
निरबाण पदु इकु हरि को नामु ॥
(पन्ना ११६३)

भक्त नामदेव जी के मत में प्रभु के नाम-सिमरन से रहित मनुष्य पशु के समान है :

जो न भजंते नाराइणा ॥
तिन का मै न करउ दरसना ॥१॥रहाउ॥
जिन कै भीतरि है अंतरा ॥
जैसे पसु तैसे ओइ नरा ॥ (पन्ना ११६३)

भक्त नामदेव जी प्रभु-नाम-सिमरन की विधि के बारे में विस्तार से दृष्टांत देकर समझाते हैं कि काम-काज करते हुए भी ध्यान सदैव प्रभु की याद में रहना चाहिए। जैसे सुनार गहने बनाते समय दूसरों से बात भी करता है, पर उसका मन हर समय कुठाली में पड़े हुए सोने में लगा रहता है; जैसे मां अपने बालक को पालने में डालती है, अंदर-बाहर घर के कार्यों में व्यस्त रहती है, पर उसका ध्यान अपने बच्चे में ही रहता है, ठीक वैसे ही मन का सदैव परमात्मा की याद में लगे रहना ही सिमरन करना है :

आनीले कागदु काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले ॥
पंच जना सिउ बात बतऊआ चीतु सु डोरी राखीअले ॥१॥
मनु राम नामा बेधीअले ॥
जैसे कनिक कला चितु मांडीअले ॥१॥रहाउ॥
आनीले कुंभु भराईले ऊदक राज कुआरि पुरंदरीए ॥
हसत बिनोद बीचार करती है चीतु सु गागरि राखीअले ॥२॥
मंदरु एकु दुआर दस जा के गऊ चरावन छाडीअले ॥
पांच कोस पर गऊ चरावत चीतु सु बछरा राखीअले ॥३॥
कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले ॥
अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले ॥ (पन्ना ९७२)

यदि परमात्मा की याद न भूले, मन किसी अन्य तरफ न जाए तो परमात्मा से प्रेम बढ़ जाता है तथा इस प्रीति की बरकत से अंदर से मेर--तेर मिट जाती है :

साई प्रीति जि आपे लाए ॥
गुर परसादी दुबिधा जाए ॥
कबहु न तूटसि रहिआ समाइ ॥
नामे चितु लाइआ सचि नाइ ॥ (पन्ना ११६४)

परमात्मा के साथ प्रीति के स्वरूप के बारे में भक्त नामदेव जी का विचार है कि प्रभु से प्रीति ऐसी होनी चाहिए कि मनुष्य अपने को भूल जाए, जिस प्रकार हिरन अपने आप को भुलाकर नाद के पीछे दौड़ता है, प्राण दे देता है, पर उसको उस नाद का ध्यान नहीं भूलता :

नाद भ्रमे जैसे मिरगाए ॥
प्रान तजे वा को धिआनु न जाए ॥१॥
ऐसे रामा ऐसे हेरउ ॥
रामु छोडि चितु अनत न फेरउ ॥
(पन्ना ८७३)

जैसे समुद्र के पानी में घड़े का पानी मिल जाता है तो वो अपना अलग अस्तित्व मिटा लेता है, वैसे ही परमात्मा से प्रेम करने वाले को अपना अपनत्व, अपना आपा-भाव

मिटाना पड़ता है :

जल भीतरि कुंभ समानिआ ॥
सभ रामु एकु करि जानिआ ॥
गुर चेले है मनु मानिआ ॥
जन नामै ततु पछानिआ ॥ (पन्ना ६५७)

प्रभु से प्रेम करने वाले का तन तथा मन प्यार में इतना डूब जाता है कि उसे इस बात की परवाह नहीं रहती कि कोई उसके बारे में अच्छा कह रहा है या बुरा, वह तो प्रभु के नाम का अमृत पीने में मस्त रहता है :

भले निंदउ भले निंदउ भले निंदउ लोगु ॥
तनु मनु राम पिआरे जोगु ॥१॥रहाउ॥
बादु बिबादु काहू सिउ न कीजै ॥
रसना राम रसाइनु पीजै ॥ (पन्ना ११६३)

चाहे कष्ट आएं, चाहे लोग उपहास करें, प्रभु से प्रेम करने वाले अपने मार्ग से विचलित नहीं होते :

तेरी भगति न छोडउ भावै लोगु हसै ॥
चरन कमल मेरे हीअरे बसैं ॥ (पन्ना ११९५)

परमात्मा का प्रेम प्राप्त करने के लिए अपने परिवार से, अन्य लोगों से तथा अपने आप से मोह तोड़ना पड़ता है :

लोग कुटंब सभहु ते तोरै तउ आपन बेढी आवै हो ॥ (पन्ना ६५७)

भक्त नामदेव जी कहते हैं कि ऐसी प्रीति की बरकत से भक्त प्रभु का रूप हो जाता है तथा उसका एक पल भर का दर्शन तीनों ताप दूर कर देता है और उसके चरणों का स्पर्श गृहस्थ के जंजाल रूप कुएं में से निकाल देता है :

दास अनिंन मेरो निज रूप ॥
दरसन निमख ताप त्रई मोचन परसत मुकति करत ग्रिह कूप ॥ (पन्ना १२५२)

भक्त नामदेव जी अपने शरीर पर गर्व करने वालों को समझाते हैं कि यह शरीर नश्वर है, नष्ट हो जाएगा। शरीर से मोह त्यागकर परमात्मा से प्रेम करना चाहिए :

हमरो करता रामु सनेही ॥
काहे रे नर गरबु करत हहु बिनसि जाइ झूठी देही ॥ (पन्ना ६९२)

प्रभु के प्रेम की दात भाग्यशाली लोगों को प्रभु-कृपा से प्राप्त होती है :

पतित पावन माधउ बिरदु तेरा ॥
धंनि ते वै मुनि जन जिन धिआइओ हरि प्रभु मेरा ॥ (पन्ना ६९४)

भक्त नामदेव जी के मत में उसी मनुष्य की बंदगी सफल हो सकती है जिसके हृदय में किसी प्रकार का कोई छल-कपट नहीं होता :

काहे कउ कीजै धिआनु जपंना ॥
जब ते सुधु नाही मनु अपना ॥ (पन्ना ४८५)

संक्षेप में कह सकते हैं कि भक्त नामदेव जी ने अपनी बाणी द्वारा मनुष्यों को परमात्मा की सर्वव्यापकता का बोध कराकर मूर्ति-पूजा से हटाया, देवी-देवताओं आदि की पूजा का निषेध किया, धार्मिक पाखंडों का विरोध कर कर्मकांडों का पर्दाफाश किया तथा समझाया कि तीर्थ, व्रत आदि मनुष्य का कुछ नहीं संवार सकते। परमात्मा के नाम का सिमरन, परमात्मा की प्रीति ही जीवन को सफल करने में समर्थ है। 

बंदी छोड़ दिवस : ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'*

संसार के सभी सिक्ख प्रत्येक वर्ष दीपावली पर्व को 'बंदी छोड़ दिवस' के रूप में श्रद्धापूर्वक एवं हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। सन् १६१३ को अगस्त माह में सिक्खों के छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ग्वालियर के किले की कैद में से अन्य बावन राजाओं को साथ लेकर रिहा हुए थे और दीपावली के दिन श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर पहुंचे थे। जहांगीर की कैद में से रिहा होने की खुशी में श्रद्धालु सिक्ख संगत ने श्री हरिमंदर साहिब सहित पूरे शहर में दीपमाला की और उत्सव मनाया। दीपावली की रात थी और गुरु जी स्वयं इस उत्सव में शामिल हुए। तब से लेकर आज तक दुनिया भर के सभी सिक्ख दीपावली पर्व को 'बंदी छोड़ दिवस' के रूप में मनाते आ रहे हैं।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को तत्कालीन मुगल शासक जहांगीर द्वारा बंदी बनाने के पीछे एक पूरी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है। हमारे लिए उस पृष्ठभूमि के बारे में जानना भी बहुत ज़रूरी है। यह तो हम जान ही चुके हैं कि उनकी रिहाई को 'बंदी छोड़ दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की बढ़ती हुई लोकप्रियता से, उनके द्वारा बनाई गई निजी सेना तथा शाही सेना के भगौड़ों को, नाम काटे गए सैनिकों को अपनी सेना में शामिल करने की वजह से जहांगीर बहुत चिढ़ता था। वह गुरु जी को गिरफ़्तार करने के बहाने ढूंढने लगा। 'महिमा प्रकाश' भी गवाही देता है कि जहांगीर इस बात से काफ़ी दुखी था कि दुनिया उनके दर्शन करने के लिए आती है और उन्हें 'सच्चा पातशाह' कहती है :

सभ संगत जिस दरशन को आवै।
कहि सच्चे पातशाह गुन गावै।
सुन जहांगीर मन माहि रिसावै।
जतन करे कुझ हाथ नांह आवै।

सन् १६०९ में गुरु जी ने पहले लोहगढ़ का किला बनवाया और फिर बाद में इसी वर्ष श्री हरिमंदर साहिब के सामने १२ फुट ऊंचे श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना की, जबकि जहांगीर ने एलान किया हुआ था कि कोई भी व्यक्ति अपना निजी चबूतरा भी दो फुट से ऊंचा नहीं बना सकता। भिन्न-भिन्न संप्रदायों के लोग अपने-अपने मुकद्दमे लेकर गुरु जी के पास श्री अकाल तख़्त साहिब पर पेश होने लगे। गुरु जी सभी को सही व सच्चा न्याय दिलाते थे। लोग अति प्रसन्न थे और उन्हें 'सच्चा पातशाह' कहने लगे थे। लोगों ने न्याय के लिए लाहौर व दिल्ली शासन की ओर ताकना बंद कर दिया। श्री अकाल तख़्त साहिब की महानता, मान्यता, उच्चता बढ़ने लगी और बादशाह जहांगीर गुरु जी को गिरफ़्तार करने के मनसूबे बनाने लगा।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा लोहगढ़ का किला बनवाना, श्री अकाल तख़्त साहिब को स्थापित करना, विरोधी सेनाओं में से नाम काटे गए सैनिकों को सुधारकर अपनी सेना में शामिल करना, लोगों के लड़ाई-झगड़े एवं मुकद्दमों के निर्णय करना और इससे भी बढ़कर लोगों को स्वतंत्रता, आत्मगौरव प्राप्त करने हेतु प्रेरित करना, ये सब काम जहांगीर द्वारा गुरु जी की गिरफ़्तारी का आदेश देने के लिए पर्याप्त थे।

विद्वाव सी. एच. पेन लिखता है :-- "गुरु जी

*बी-एक्स ९२५, महल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, मो. ९८७२२-५४९९०

के शाही ठाठ (शान) एवं सेना ने जहांगीर को चेतन किया और उसने आदेश दे दिया कि (गुरु) हरिगोबिंद (साहिब) को गिरफ़्तार कर ग्वालियर के किले में भेज दिया जाए।"

इसी संबंध में इतिहासकार कनिंघम लिखता है :-- "गुरु जी का अपना अलबेला स्वभाव और युद्ध करने हेतु झुकाव उनकी गिरफ़्तारी का कारण बना। गुरु जी कुश्ती लड़ते तथा खेल खेलते, आनंद लेते थे। इन्हीं झुकावों ने गुरु जी को शिकार करने एवं सैन्य जीवन व्यतीत करने की ओर प्रेरित किया।"

प्रिंसीपल सतिबीर सिंघ के अनुसार सी. एच. पेन ने एक अन्य कारण भी बताया है। वह कहता है :-- "(गुरु) हरिगोबिंद (साहिब) ही एक ऐसे इंसान थे, जो पिता श्री गुरु अरजन देव जी की शिक्षाओं पर चलने को समर्थ योग्य थे। वे (श्री गुरु अरजन देव जी) जाते समय कह गए थे कि सिक्ख धर्म, सच, प्रेम, गौरव व आज़ादी की रक्षा के लिए तब तक जूझते-लड़ते रहना, जब तक ज़ालिम खत्म न हो जाएं या सुधर न जाएं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की भी यही इच्छा थी कि मज़लूमों को ज़ालिमों के हाथों से छुड़ाया जाए। ऐसे वीर योद्धा तैयार किए जाएं जो प्रत्येक खतरे के आगे डटकर खड़े हो सकें और हरेक कुर्बानी के लिए तत्पर रहें। ऐसे आज़ादी वाले विचार सरकार सहन नहीं कर सकती थी। गुरु जी को गिरफ़्तार करने के लिए उन्होंने दोष ढूंढने शुरू कर दिए।"

उपरोक्त विचारों के आलोक में कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में भी दुनिया की अनेक सरकारों ने लोगों की सच्ची आज़ादी, गौरव, सम्मान प्राप्त करने की इच्छा को दमनात्मक ढंग से कुचलने, दबाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ रखी है।

सन् १६११ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गिरफ़्तार कर लिया गया और उन्हें एक ग्वालियर के किले में भेज दिया गया। जिस कमरे में गुरु जी को बंदी बनाकर रखा गया, वह सबसे ऊपर की मंज़िल पर स्थित था। आलगीर द्वार को लांघकर उस कमरे को 'मान मंदिर' में अब भी देखा जा सकता है। यह किला ग्वालियर शहर की पूरब दिशा में स्थित है और इसे शहर के किसी भी ओर से देखा जा सकता है।

गुरु जी द्वारा किले में आने पर वहां कैद किए गए सभी कैदियों में खुशी की लहर दौड़ गई। उन कैदियों में अधिकतर वही राजा थे, जिन्हें बगावत के दोष में अनियमित समय के लिए बंदीगृह में डाला गया था। बंदी बनाए गए राजाओं की हालत अति दयनीय थी। वे जीवन से तंग आकर अपना आत्मसम्मान, आत्मविश्वास खो चुके थे। प्रथम दिन ही जब उन्होंने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को अपने बीच देखा तो उनके मन में एक विश्वास पैदा हुआ। उन्हें रिहाई की आशा की किरण दिखाई देने लगी कि बंदीगृह से छुड़ाने वाला रहबर पहुंच चुका है। 'महिमा प्रकाश' के शब्दों में :

बड़े लोक बंद तह रहे।
सतिगुर पास आन सभ बहे।
जब लग दरसन प्रभ का करें।
चिंता सोक देखत परहरैं।

गुरु जी ने जेल के कर्मचारियों द्वारा दिया गया भोजन खाने से मना कर दिया। मुहसिन फ़ानी लिखता है कि "आपको नमकीन खुराक तक को खाने नहीं दिया गया। जेल में दारोगा हरिदास ने ग्वालियर शहर के एक सिक्ख मज़दूर, जो हरी घास बेचा करता था, के घर का बना खाना लाने का प्रबंध कर दिया। गुरु जी को पता था कि जेल प्रशासन द्वारा दिए जाते भोजन में कच्चे ज़हर दिए जाते हैं। वे हर बात का ध्यान रखते थे। गुरु जी जब तक जेल में रहे, तब तक बाहर से ही खाना आता रहा। दारोगा हरिदास ने पहले से ही गुरु जी की शोभा सुन रखी थी। वह गुरु जी के चरणों से जुड़कर सिक्ख बन गया और उनकी श्रद्धा में

रहने लगा।"

गुरु जी ग्वालियर में कैद थे और सिक्खों में बेचैनी बढ़ने लगी। बाबा बुड्ढा जी व भाई गुरदास जी की अगुआई में सिक्खों ने रोष भरी बैठकें शुरू कीं। रात में मशालें जलाकर सिक्ख गुरु-शबद पढ़ते और प्रदर्शन करते। यह सब कुछ अमनपूर्वक किया जा रहा था। कई जत्थे पंजाब से चलकर ग्वालियर में पहुंचते। दुर्ग की परिक्रमा कर वापिस लौटते। पूरा पंजाब जाग उठा। न्यायप्रिय मुसलमानों ने भी निवेदन लिखकर जहांगीर तक पहुंचाए कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को रिहा किया जाए। विशेष तौर पर वज़ीर खान तथा साईं मीयां मीर जी ने स्वयं आगरा पहुंचकर जहांगीर को प्रेरित किया कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को बंदीगृह में से आज़ाद किया जाए। दूसरी ओर दीवान चंदू अपने बुरे मनसूबों को पूरा करने की योजनाएं बनाने लगा। उसने पहले विषाक्त चोला भेजा। फिर हरिदास दारोगा को भी अपने साथ गांठने की कोशिश की, लेकिन उसने पूरी बात अपने इष्ट (गुरु जी) को बता दी कि कमीना चंदू कैसी-कैसी कमीनी हरकतें कर रहा है। उसने गुरु जी को सुचेत रहने की भी विनय की।

आखिर वज़ीर खान व साईं मीयां मीर जी ने अपने प्रयत्नों द्वारा गुरु जी की रिहाई का हुक्म जहांगीर से ले लिया। जहांगीर भी समझ गया था कि ज्यादा देर तक यह लहर रोकी नहीं जा सकेगी, अत: गुरु जी के साथ मेल-मिलाप रखना ठीक रहेगा।

जब वज़ीर खान (हकीम अलीमुद्दीन अंसारी, निवासी चिनुट) रिहाई का जुक्म लेकर ग्वालियर के किले में पहुंचा तो गुरु जी ने रिहा होने से स्पष्ट इंकार कर दिया। उन्होंने कहा, "जब तक इन निर्दोष राजाओं को भी रिहा नहीं किया जाता, तब तक मैं यहां से बाहर निकलने के लिए तैयार नहीं हूं।"

वज़ीर खान पुनः वापिस आगरा में आया और जहांगीर को समझाने का प्रयास किया। पहले तो जहांगीर नहीं माना। फिर उसे वज़ीर खान की तर्कपूर्ण बातें माननी ही पड़ीं और उसने ५२ राजाओं को भी रिहा करने का आदेश भेज दिया। इस आदेश को नाटकीय रूप देने हेतु हरिदास ने एक योजना बनाई कि जो कोई भी गुरु जी के चोले को पकड़े रखेगा, उसको ही रिहा किया जाएगा। 'महिमा प्रकाश' के अनुसार :

जो दामन पकड़ गुर बाहर आवै।
सो भये खलास अपने घर जावै।

गुरु जी के लिए ५२ कलियों वाला विशेष चोला सिलवाया गया। प्रत्येक कली के फीते (डोरी) को एक-एक राजा ने पकड़ा तथा वे रिहा हुए। इस घटना के बारे में सुनकर सिक्ख संगत ने एवं अन्य लोगों ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को 'बंदी छोड़ दाता' कहना शुरू कर दिया।

अगस्त १६१३ ई में गुरु जी रिहा हुए और सिक्खों के हृदयों को शांत करते हुए, सिक्ख धर्म का प्रचार करते हुए श्री अमृतसर में पहुंचे और श्री हरिमंदर साहिब में दीपावली का त्यौहार मनाया। तभी से रिवायत के अनुसार प्रत्येक वर्ष दीवाली पर्व सिक्खों द्वारा पूरे उत्साह, श्रद्धा, उल्लास व हर्ष से 'बंदी छोड़ दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

गुरु जी द्वारा दिखाए गए मार्ग से प्रेरणा लेकर हम सबको अहं, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, झूठ, फ़रेब, घमंड, बेईमानी जैसे अवगुणों की कैद में से स्वयं को मुक्त करना है और धर्म, परोपकार, प्यार, सद्भाव, ईमानदारी, सच्चाई जैसे सद्गुणों को अपनाना है। 'बंदी छोड़ दिवस' की महानता को सच्चे अर्थों, भावों में समझने की आवश्यकता है।



गुरुद्वारा श्री अच्चल साहिब (बटाला)

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

श्री गुरु नानक देव जी ने अज्ञानता के अंधेरे में ठोकरें खा रही समूची मानवता को सत्य के ज्ञान के प्रकाश में परमात्मा की भक्ति करने का उपदेश दिया। उन्होंने दिखावे वाला (धार्मिक) जीवन व्यतीत कर रहे लोगों के साथ कई धर्म-चर्चाएं कीं। इन धर्म-चर्चाओं में गुरु जी ने उनको दिखावे का जीवन छोड़कर व्यवहारिक जीवन व्यतीत करने का उपदेश दिया।

चार प्रचार-यात्राएं करने के बाद जगत-तारक श्री गुरु नानक देव जी रावी नदी के किनारे करतारपुर (अब पाकिस्तान में) नगर बसाकर रहने लगे। यहां पर रहते हुए आप जी ने अकाल पुरख परमात्मा की आराधना करने के साथ-साथ अपनी तरफ से दर्शाए गए 'किरत' के सिद्धांत को खुद व्यवहारिक रूप प्रदान किया। यहां पर रहते कुछ वर्षों के बाद संवत् १५८६ (मार्च, १५३० ई) में आप जी को यहां पता चला कि अच्चल-बटाले नामक स्थान पर (जहां एक पुरातन शिव मंदिर अचलेश्वर भी है) शिवरात्रि के मेले पर योगियों और सिद्धों की एक बहुत बड़ी एकत्रता होनी वाली है। गुरु जी करतारपुर से चलकर अच्चल-बटाला पहुंच गए और योगियों की भीड़ से थोड़ा दूर बैठ गए। इस बाबत भाई गुरदास जी ज़िक्र करते हैं :

मेला सुणि सिवराति दा बाबा अचल वटाले आई। *(वार १:३९)*

अच्चल-बटाला नामक स्थान पंजाब के ज़िला गुरदासपुर के कसबा बटाला के समीप बटाला-जलंधर सड़क पर बटाला से लगभग ४ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

इस स्थान पर बैठकर श्री गुरु नानक देव जी 'धुर की बाणी' का इलाही कीर्तन करने लगे। भाई मरदाना जी रबाब बजाने लगे। जो लोग योगियों और सिद्धों के पास बैठे थे वे सभी गुरु जी का प्रताप देख तथा बाणी की मधुर गूंज सुनकर उनके इर्द-गिर्द आकर बैठ गए तथा 'धुर की बाणी' का इलाही कीर्तन श्रवण करने लगे। इसका ज़िक्र भाई गुरदास जी इस तरह करते हैं :

दरसनु वेखणि कारने सगली उलटि पई लोकाई। *(वार १:३९)*

यह सारा दृश्य देखकर योगियों को बहुत गुस्सा आया। वे सभी इकट्ठे होकर श्री गुरु नानक देव जी के पास पहुंच गए। उस समय उनमें मौजूद योगियों का मुखिया भंगरनाथ गुरु साहिब को कुबोल (कठोर वचन) बोलने लगा और गुरु जी से कहने लगा कि आप ने दूध में कांजी (खटाई) डालने वाला काम क्यों किया है? उसके कहने से तात्पर्य था कि आपने फ़कीरी वेश धारण करके फ़कीरी रूप दूध के बर्तन में गृहस्थी बन कर गृहस्थ रूप कांजी (खटाई) क्यों डाली है? अब तो मक्खन अर्थात् मुक्ति और ज्ञान दोनों ही आपके आलोप समझो!

खाधी खुणसि जोगीसरां गोसटि करनि सभे उठि आई।
पुछे जोगी भंगरनाथु, 'तुहि दुध विचि किउ कांजी

**२९४६/७, बाजार लुहारां, चौंक लछमणसर, श्री अमृतसर-१४३००१, मो ८७२७८००३७२*

पाई?
फिटिआ चाटा दुध दा रिड़किआ मखणु हथि न आई।
भेख उतारि उदासि दा, वति किउ संसारी रीति चलाई ?' *(वार १:४०)*

श्री गुरु नानक देव जी ने वहां पर योगियों को उपदेश देते हुए पूछा कि जिन गृहस्थियों को वे बुरा और घटिया समझते हैं, फिर उन्हीं के घरों में जाकर भोजन और वस्त्र क्यों मांगते हैं? जिनसे मांगकर खाते हैं उनको निंदा का पात्र वे क्यों बनाते हैं ? यह उनका कैसा त्याग एवं योग है ? खुद कोई काम न करके दूसरों की कमाई के बलबूते मौज-मस्ती करते हो, यह कैसी भक्ति है? गुरु जी ने भंगरनाथ को संबोधित होते हुए कहा कि तुम्हारी **'मां'** अर्थात् तुम्हारी **'बुद्धि'** कुचज्जी है। तुम्हारी बुद्धि ने तुम्हारा हृदय नहीं धोया :

नानक आखे, 'भंगरिनाथ! तेरी माउ कुचजी आही।
भांडा धोइ न जातिओनि भाइ कुचजे फुलु सड़ाई।
होइ अतीतु ग्रिहसति तजि फिरि उनहु के घरि मंगणि जाई।' *(वार १:४०)*

गुरु साहिब ने योगियों को उपदेश देते हुए कहा कि गृहस्थ के सारे फर्ज पूरी ईमानदारी और योग्यता से निभाते हुए भी परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है। वास्तव में यही योग-साधना है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से बच कर अपने मन पर विजय प्राप्त करो। परमात्मा की रज़ा में अडोल रहो। परिवार व समाज की जिम्मेदारियों से डर कर **'योगी'** का भेष धारण करके जंगलों-पहाड़ों की तरफ मत भागो, बल्कि सर्वशक्तिमान परमात्मा का सहारा लेते हुए प्रत्येक सांसारिक मुश्किल को हल करो। जीत और हार परमात्मा पर छोड़ो।

उपरोक्त सारी बातें सुन कर भी योगियों का अहंकार न टूटा। वे अपने आप को श्री गुरु नानक देव जी से हो रही गोष्ठि (वार्तालाप) में हारते हुए प्रतीत कर रहे थे। परिणामतः योगी क्रोध में आ गए और अपनी करामाती शक्तियों से छल-कपट करके गुरु जी को डराने-धमकाने लगे, अद्भुत प्रकार के भेस बदलने लगे, परंतु गुरु जी परमात्मा के हुक्म में अडोल रहे। योगियों की करामातों के बारे में भाई गुरदास जी फरमाते हैं :

इहि सुणि बचनि जोगीसरां, मारि किलक बहु रूइ उठाई।
खटि दरसन कउ खेदिआ कलिजुगि नानक बेदी आई।
सिधि बोलनि सभि अवखधीआ तंत्र मंत्र की धुनो चढ़ाई।
रूप वटाए जोगीआं सिंघ बाघि बहु चलिति दिखाई।
इकि परि करि कै उडरनि पंखी जिवै रहे लीलाई।
इक नाग होइ पउण छोड़िआ इकना वरखा अगनि वसाई।
तारे तोड़े भंगरिनाथ इक चड़ि मिरगानी जलु तरि जाई।
सिधा अगनि न बुझै बुझाई ॥ *(वार १:४१)*

अंत में सभी प्रकार की करामातें, डरावे इत्यादि देकर योगी थक-हार गए और गुरु जी के पास आकर उनसे उनकी अडोलता का राज पूछने लगे। श्री गुरु नानक देव जी ने अकाल पुरख की निच्छल और निष्कपट भक्ति, सच्ची स्तुति को अपनी अडोलता का भेद बताया :

बाबा बोले नाथ जी! सबदु सुनहु सचु मुखहु अलाई।

बाझो सचे नाम दे होरु करामाति असां ते नाही। *(वार १:४३)*

गुरु जी के शुभ एवं पवित्र वचन सुनकर योगियों को अपने मन में काफी शर्मिंदगी का एहसास हुआ और उन्होंने गुरु नानक साहिब की प्रभु-भक्ति को धन्य कहा। वहां से सभी योगी विदा हुए :

बाबे कीती सिधि गोसटि सबदि सांति सिधां विचि आई।
जिणि मेला सिवराति दा खट दरसनि आदेसि कराई।
सिधि बोलनि सुभि बचनि धनु नानक तेरी वडी कमाई। *(वार १:४४)*

इसके उपरांत श्री गुरु नानक देव जी कलयुगी जीवों का उद्धार करते हुए वापिस करतारपुर चले गए। छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब वैसाख माह, सन् १६२५ ई बटाला में अपने सुपुत्र बाबा गुरदित्ता जी की शादी करने आए तो वे श्री गुरु नानक देव जी के चरण-स्पर्श प्राप्त इस पावन स्थान पर भी पधारे। इस जगह पर छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अष्टभुजी (आठ कोनों वाला) एक कुआं खुदवाया जो इस स्थान पर आज भी मौजूद है। महाराजा रणजीत सिंघ ने अपने शासन-काल में इस पावन स्थान के नाम १५० घूमां जमीन लगवाई थी।

वर्तमान समय में इस पावन और रमणीक स्थान पर बहुत ही खूबसूरत गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है, जिसका प्रबंध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर की तरफ से नियुक्त मैनेजर की देख-रेख में चल रहा है।

इस जगह पर श्री गुरु नानक देव जी की आमद की याद में कार्तिक की अमावस के बाद नवमी और दसवीं को भारी जोड़-मेला लगता है, जिसमें दूर-दूर से संगत इस पावन स्थान के दर्शन करने आती है।



कविता

गुरमति ज्ञान

'गुरमति ज्ञान' सर्व मति भूषण जान।
सत्व गुण गान करे बढ़ाए नाम-मान।
'गुरमति ज्ञान' सिक्खों का मात्र न जान।
जात-पात भुलाकर विशाल बनाए प्राण।
'गुरमति ज्ञान' से छूटते संत-बाणी-बाण।
काम, क्रोध, अहं छुड़ाता देकर त्राण।
'गुरमति ज्ञान' से नित्य बढ़ती विद्वता-पहचान।
सिक्ख गुरुगण का इतिहास मिलता ससम्मान।
'गुरमति ज्ञान' भक्ति-मार्ग का करता उत्थान।
धर्म-कर्म का पाठ पढ़ाता ज्यों दिनमान।
'गुरमति ज्ञान' सिखाता क्या शान, क्या है ईमान।
वाद-विवाद सुलझाकर बनाए हर व्यक्ति को 'इंसान'।



- Shri M. V. Subburaman, 160/40-A, Vadivel Nagar, Near Nirmala Girls Hr. Sec. School, Kamarajar Salai, Madurai-625009, M. 99424-90217

गुरबाणी चिंतनधारा : ७४

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

तेरहवीं असटपदी

सलोकु ॥
संत सरनि जो जनु परै सो जनु उधरनहार ॥
संत की निंदा नानका बहुरि बहुरि अवतार ॥१॥
(पन्ना २७९)

तेरहवीं असटपदी के पावन सलोक में गुरु पंचम पातशाह ने दो विशेष पहलुओं पर प्रकाश डाला है-- एक तो पूर्ण संत की शरण भवसागर से पार उतारने वाली है तथा इसके विपरीत सच्चे संत की निंदा करने वालों को आवागमन के चक्कर में जाना पड़ता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जो मनुष्य संत की शरण पड़ता है वह माया के बंधनों से मुक्त हो जाता है। संत की निंदा करने वाला बार-बार जन्म लेता है और मरता है अर्थात् संत का निंदक सदैव आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है।

१३वीं असटपदी की विचार-व्याख्या करने से पूर्व 'संत' शब्द के भावार्थ तथा शब्दार्थ जानने का विनम्र प्रयास करें। 'संत' शब्द का प्रयोग उपनिषद काल से प्रचलित है। तत्पश्चात महाभारत, भागवत आदि ग्रंथों में 'संत' शब्द का प्रयोग किया गया है। रामचरित मानस में भी श्री रामचंद्र जी द्वारा संत के लक्षण एवं महिमा का गुणगान किया गया है।

इस शब्द की व्युत्पत्ति कुछ विद्वान 'शांत' तो कुछ 'संति' तथा अन्य 'संत्य' शब्द से मानते हैं। महाभारत में 'संत' शब्द का अर्थ सदाचारी तथा भागवत में पवित्र आत्मा के रूप में प्रयुक्त हुआ है। गुरबाणी में 'संत' शब्द की विशद व्याख्या की गई है। भक्त रविदास जी के चिंतनानुसार 'संत' परमेश्वर का ही शरीर है जिसकी संगत प्राणियों के प्राण हैं। उन 'संतों' को सच्चे गुरु से प्राप्त ज्ञान द्वारा पहचाना जा सकता है :

संत तुझी तनु संगति प्रान ॥
सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव ॥१॥
संत ची संगति संत कथा रसु ॥
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव ॥ (पन्ना ४८६)

गुरबाणी में 'संत' शब्द सर्वशक्तिमान प्रभु, पूर्ण सतिगुरु, समर्थ पुरुष, ब्रह्मज्ञानी, साधु आदि के समानार्थक रूप में प्रयोग हुआ है। गुरु पंचम पातशाह जी ने उपरोक्त सलोक में भी संत की शरण आने का पावन आदेश दिया है।

संत तथा हरि अभेद हैं। यहां डॉ. मुक्तेश्वर तिवारी की साहित्यिक अर्थ में 'संत' शब्द की व्याख्या उल्लेखनीय है :--

"संत शब्द उस व्यक्ति विशेष की ओर संकेत करता है जिसने ब्रह्मतत्व की अनुभूति कर ली हो तथा अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर उसके साथ तद्‌रूप हो गया हो और जिसने सत्य का साक्षात्कार कर लिया हो।"

(मध्ययुगीन सूफी और संत, पृष्ठ १५०)

इसी भाव को भक्त कबीर जी ने *"हरि जनु ऐसा चाहीऐ जैसा हरि ही होइ"* कहकर

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३*

'संत' शब्द को परिभाषित किया है। गुरबाणी हमें ऐसे पूर्ण पुरुष सतिगुरु से बलिहार (कुर्बान) होने को प्रेरित करती है जो स्वयं तो मुक्त है और शरणागत को मुक्त करने की सामर्थ्य रखता है :

ऐसे गुर कउ बलि बलि जाईऐ आपि मुकतु मोहि तारै ॥१॥रहाउ॥
कवन कवन कवन गुन कहीऐ अंतु नही कछु पारै ॥ (पन्ना १३०१)

गुरबाणी आशयानुसार ऐसे संत पुरुषों की कृपा से हृदय रूपी कमल खिल उठता है और प्रभु की समीपता का एहसास बना रहता है तथा उसका सिमरन होता रहता है :

संत प्रसादि कमलु बिगसै गोबिंद भजउ पेखि नेरै ॥ (पन्ना १३०१)

असटपदी ॥
संत कै दूखनि आरजा घटै ॥
संत कै दूखनि जम ते नही छुटै ॥
संत कै दूखनि सुखु सभु जाइ ॥
संत कै दूखनि नरक महि पाइ ॥
संत कै दूखनि मति होइ मलीन ॥
संत कै दूखनि सोभा ते हीन ॥
संत के हते कउ रखै न कोइ ॥
संत कै दूखनि थान भ्रसटु होइ ॥
संत क्रिपाल क्रिपा जे करै ॥
नानक संतसंगि निंदकु भी तरै ॥१॥

तेरहवीं असटपदी की पहली पउड़ी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पूर्ण संत की निंदा करने वाले निंदक की दुर्दशा का ज़िक्र करते हुए जीव को वास्तव में ऐसे दुष्कर्म से बचने की अपरोक्ष रूप में प्रेरणा दे रहे हैं। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि संत की निंदा करने वाले मनुष्य की आयु कम हो जाती है अर्थात् संत के दोष निकालने वाले व्यक्ति की उम्र व्यर्थ ही बीत जाती है। संत का निंदक यमों की मार से नहीं बच सकता। संत की निंदा करने वाले व्यक्ति से सुख मुंह फेर लेते हैं अर्थात् संत का निंदक समस्त सुखों से वंचित हो जाता है। संत की निंदा करने वाला व्यक्ति घोर नर्क में जा पड़ता है। निंदा-कर्म के कारण उसका जीवन नर्क जैसा भयावह एवं दुखदायी हो जाता है। संत की निंदा करने से बुद्धि विकारों की मैल से भर जाती है अर्थात् मलिन हो जाती है। संत का निंदक जगत में अपनी शोभा (मान-सम्मान) गंवा बैठता है। संत द्वारा तिरस्कृत (अपमानित) मनुष्य की जगत में कोई मदद नहीं करता। संत की निंदा से स्थान अपवित्र हो जाता है। अंतिम पंक्ति में गुरु पातशाह रहस्यमयी तथ्य को उदघाटित करते हुए पावन फरमान करते हैं कि बेशक संत का निंदक सब तरह से भ्रष्ट हो जाता है फिर भी अगर रहम-दिल (दयालु) संत स्वयं कृपा करे तो (संत की संगत से) निंदक भी भवसागर से पार उतर सकता है।

वास्तव में गुरबाणी में निंदा जैसे पाप-कर्म से बचने हेतु बार-बार प्रेरणा दी गई है। निंदा तो साधारण मनुष्य की भी करना अनुचित है। उसके कारण भी दूसरों के पाप अपने सिर उठाने समान है, तो संत, जो कि हरि का ही रूप होते हैं, उनकी निंदा कितनी कष्टप्रद होगी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। भक्त कबीर जी ने निंदक की स्थिति को बाखूबी बयान किया है। उन्होंने व्यंग्यात्मक शैली में भी समझाने का यत्न किया है कि निंदक किस प्रकार हमारे हितैषी हैं, जो स्वयं हमारे पापों का बोझ अपने सिर उठाकर हमें पाप-मुक्त करने में हमारी सहायता करते हैं :

निंदउ निंदउ मो कउ लोगु निंदउ ॥

निंदा जन कउ खरी पिआरी ॥
निंदा बापु निंदा महतारी ॥ . . .
जन कबीर कउ निंदा सारु ॥
निंदकु डूबा हम उतरे पारि ॥ (पन्ना ३३९)

साथ ही भक्त कबीर जी स्पष्ट कर देते हैं कि किस प्रकार निंदक डूब जाता है और जिसकी निंदा होती है वह भवसागर से पार उतर जाता है। स्पष्ट है कि हमें निंदा-कर्म से बचना चाहिए।

वस्तुत: उपरोक्त संदर्भ में विचार करें तो संत हरि का साकार रूप है। सच्चे संत की निंदा तो परमेश्वर की ही निंदा है। गुरबाणी हमें निंदा जैसे निकृष्ट कर्म से बचने की हिदायत देती है, यथा गुरबाणी-प्रमाण है :

संता कउ मति कोई निंदहु संत रामु है एको ॥
कहु कबीर मै सो गुरु पाइआ जा का नाउ बिबेको ॥ (पन्ना ७९३)

पूर्ण गुरु की कृपा से ही यह ज्ञान प्राप्त होता है कि निंदा तो किसी की भी भली नहीं, संत पुरख की तो हरगिज नहीं, क्योंकि संत तथा परमेश्वर एक रूप हैं।

संत के दूखन ते मुखु भवै ॥
संतन कै दूखनि काग जिउ लवै ॥
संतन कै दूखनि सरप जोनि पाइ ॥
संत कै दूखनि त्रिगद जोनि किरमाइ ॥
संतन कै दूखनि त्रिसना महि जलै ॥
संत कै दूखनि सभु को छलै ॥
संत कै दूखनि तेजु सभु जाइ ॥
संत कै दूखनि नीचु नीचाइ ॥
संत दोखी का थाउ को नाहि ॥
नानक संत भावै ता ओइ भी गति पाहि ॥२॥

१३वीं असटपदी की दूसरी पउड़ी में भी संत के निंदक की दुर्दशा का वर्णन पंचम पातशाह द्वारा किया गया है कि किस प्रकार संत का निंदक निकृष्ट योनियों में ही भटकता रहता है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि संत की निंदा करने वाले मनुष्य का मुख परमार्थ की ओर से मुड़ जाता है अर्थात् विकृत हो जाता है। संत का निंदक कौए की तरह काँव-काँव करता रहता है अर्थात् कर्कश ध्वनि निकालता हुआ व्यर्थ ही बकता रहता है। संत के निंदक को सर्प योनि में डाल दिया जाता है और संत की निंदा करने वाला रेंगने वाले कीड़ों जैसी टेढ़ी-मेढ़ी योनियों में पड़ता है। (सांप-बिच्छू जैसी तिरस्कृत योनियों में भटकता रहता है।) संतों का दोषी अर्थात् संत-जनों का निंदक तृष्णा की आग में जलता रहता है। संत का निंदक सबके साथ छल-कपट (धोखाधड़ी) करता रहता है। दूसरे शब्दों में यह भी माना जा सकता है कि ऐसे व्यक्ति दूसरों के साथ कपट करते हुए स्वयं ही विषय-विकारों की गिरफ्त में आकर छले जाते हैं। संतों पर दोषारोपण करने वालों का सारा प्रताप (ऊर्जा) नष्ट हो जाता है। संत का दोषी अधम से अधम स्थिति वाला हो जाता है अर्थात् नीचों में अति नीच गिना जाता है। संत से ईर्ष्या करने वाले हेतु कोई ठौर-ठिकाना नहीं रह जाता है अर्थात् समाज में उसे सम्मान और आश्रय नहीं मिलता। अंतिम पंक्ति में गुरु पंचम पातशाह फरमान करते हैं कि हां, अगर संत को अच्छा लग जाए तो ऐसा निंदक भी उच्च अवस्था को प्राप्त हो सकता है।

उपरोक्त पउड़ी में जहां संत के निंदक की अधम स्थिति का चित्रण किया गया है, साथ ही अंतिम पंक्ति में संत की दयालुता को भी स्पष्ट किया गया है कि अगर वो कृपा के घर में आ जाए तो निकृष्ट स्वभाव वाले निंदकों को भी क्षमा कर उन्हें मुक्तावस्था का अधिकारी बना

देता हैं। गुरबाणी में अन्यत्र भी समझाया गया है कि जिस प्रकार नीच व्यक्ति अपना दुष्ट स्वभाव नहीं त्यागता ठीक वैसे ही सज्जन पुरुष अपने गुणों एवं सहनशीलता के स्वभाव को नहीं त्यागता :

कबीर संतु न छाडै संतई जउ कोटिक मिलहि असंत ॥
मलिआगरु भुयंगम बेढिओ त सीतलता न तजंत ॥
(पन्ना १३७३)

अर्थात् भक्त कबीर जी पावन फरमान करते हैं कि करोड़ों असंत मिलने पर भी संत-जन अपना शांत स्वभाव नहीं छोड़ते, जैसे चंदन के वृक्ष के चारों ओर (जहरीले) सांप लिपटे रहते हैं परंतु फिर भी चंदन का वृक्ष अपनी शीतलता का त्याग नहीं करता।

संत का निंदकु महा अतताई ॥
संत का निंदकु खिनु टिकनु न पाई ॥
संत का निंदकु महा हतिआरा ॥
संत का निंदकु परमेसुरि मारा ॥
संत का निंदकु राज ते हीनु ॥
संत का निंदकु दुखीआ अरु दीनु ॥
संत के निंदक कउ सरब रोग ॥
संत के निंदक कउ सदा बिजोग ॥
संत की निंदा दोख महि दोखु ॥
नानक संत भावै ता उस का भी होइ मोखु ॥३॥

तेरहवीं असटपदी की तीसरी पउड़ी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने संत के निंदक को पतित और अत्याचारी घोषित किया है तथा स्पष्ट किया है कि संत के निंदक के पास से समस्त सुख-राज-भाग छिन जाता है। वो कंगाल और दीन-हीन हो जाता है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि संत का निंदक महा अत्याचारी होता है अर्थात् बड़ा जुल्मी होता है। उसे एक पल के लिए भी चैन नहीं मिलता अर्थात् हर क्षण पाप-कर्मों में लिप्त होने के कारण उसे किसी पल भी शांति नहीं मिलती। उसकी अवस्था महा हत्यारे जैसी होती है। ऐसे निंदक परमेश्वर द्वारा शापित अर्थात् तिरस्कृत होते हैं। संत का निंदक दुनियावी सुखों से भी वंचित हो जाता है। संत का निंदक बहुत दुखी और दीन-हीन हो जाता है। संत के निंदक को रोग चारों ओर से आ घेरते हैं अर्थात् वह चारों ओर से मुसीबतों में फंस जाता है। संत के निंदक की पीड़ा खत्म नहीं होती अर्थात् सुखों के सागर परमेश्वर से उसका सदा बिछोड़ा ही रहता है। प्रभु से वियोग उसके दुखों का अहम कारण बन जाता है। संत की निंदा महा पाप है। अंतिम पंक्ति में पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि अगर संत-जन को भा जाए अर्थात् अच्छा लगे तो वे महापातकी निंदकों का भी उद्धार कर देते हैं।

संत के निंदक की दशा अत्यंत दयनीय हो जाती है। फिर भी संत पुरुषों की करुण भावना एवं दयादृष्टि से महापापी निंदक भी मुक्ति पा लेता है। संतों की उदारता अकथनीय है।

संत का दोखी सदा अपवितु ॥
संत का दोखी किसै का नही मितु ॥
संत के दोखी कउ डानु लागै ॥
संत के दोखी कउ सभ तिआगै ॥
संत का दोखी महा अहंकारी ॥
संत का दोखी सदा बिकारी ॥
संत का दोखी जनमै मरै ॥
संत की दूखना सुख ते टरै ॥
संत के दोखी कउ नाही ठाउ ॥
नानक संत भावै ता लए मिलाइ ॥४॥

चौथी पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी संत के निंदक के अनेक दोषों का ज़िक्र करते हुए संत के दयालु स्वभाव की सुंदर अभिव्यक्ति

प्रस्तुत करते हैं। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि संत का निंदक सदा अपवित्र (मैले स्वभाव वाला) होता है। संत का निंदक किसी का भी सज्जन-मित्र अर्थात् सगा-सम्बंधी नहीं बनता। संत के दोषी को सदा यम (धर्मराज) का दंड अथवा जुर्माना लगता है अर्थात् उसे यमराज द्वारा सज़ा मिलती है। संत के दोषी को सब त्याग देते हैं अर्थात् उसे अपने नीच कर्मों का फल स्वयं ही भोगना पड़ता है। उसका कोई भी साथ नहीं देता। संत का निंदक बड़ा अहंकारी होता है तथा अपनी अकड़ के कारण किसी दूसरे को कुछ भी नहीं जानता। संत का निंदक सदैव बुरे कर्म करता हुआ विकारों में ग्रस्त रहता है। अधम कर्मों के कारण वह बहुत विकारी हो जाता है। संत का दोषी सदैव आवागमन के चक्कर में फंसा रहता है अर्थात् वह बार-बार जन्मता है और मरता है। संत का दोषी सदैव सुखों से वंचित रहता है। संत के दोषी को कोई आश्रय (सहारा) नहीं मिलता अर्थात् उसका कोई ठौर-ठिकाना नहीं होता। अंतिम पंक्ति में गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि अगर संत-जन चाहें तो ऐसे निंदक को भी परमेश्वर से मिला देते हैं।

वस्तुत: जहां निंदक अपने निंदा करने वाले निकृष्ट स्वभाव को नहीं त्यागता ठीक वैसे ही संत पुरुष अपनी सज्जनता को नहीं त्यागते तथा अपने क्षमाशील स्वभाव (विशेष गुण) के कारण दुष्ट-निंदक को भी सही मार्ग पर चलाकर प्रभु से मिला देते हैं। 

कविता

शहादत महान

पंचम गुरुदेव
शहादत महान।
शहादत सुजान।
लोकता के लिए
हो गए कुर्बान।
देने के लिए
रिश्तों को नई पहचान।
गुरुता को महान पहचान।
खत्म हो जाए
चौबारे की ईंट का
मोरी में लगन-लगान।
योग्यता हो विधि-विधान।
समाजों की नींव
विचार बन जाएं
न कि अफसरी फ़रमान।
जाति अहंकार
कुर्सी अहंकार
कर न पाएं
समाजों को वीरान।
सांझ-समझ का
परचम सदा ऊंचा लहराए
जब्र और जुल्म का
मिट जाए नामो-निशान।
पंचम गुरुदेव
कुर्बानी महान।
कुर्बानी अर्थवान।
सदियों को दिया वरदान।



-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर,-१४३५२१ मो. ९४१७१-७५८४६

गुर सिखी बारीक है . . . ३०

-डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब ज्ञान का ऐसा अनमोल और विशाल भंडार हैं जिसके समतुल्य विश्व में कोई अन्य ग्रंथ हो ही नहीं सकता। इसमें गूढ़ जीवन-रहस्यों का अनावरण देखने की दृष्टि, गुण ग्रहण करने की दिशा और परमात्मा को पाने की विधि तो है ही, जीवन को उद्देश्य सहित जीने की सशक्त और महान प्रेरणा भी भरपूर है। एक बार जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की शरण में आ जाए तो उसका जीवन सफल हो जाता है और मुक्ति का मार्ग मिल जाता है। इस बात को श्री गुरु अरजन देव जी के निम्न वचनों द्वारा सुगमता से समझा जा सकता है :

गुर कै सबदि बनावहु इहु मनु ॥
गुर का दरसनु संचहु हरि धनु ॥१॥
ऊतम मति मेरै रिदै तूं आउ ॥
धिआवउ गावउ गुण गोविंदा अति प्रीतम मोहि लागै नाउ ॥१॥रहाउ॥
त्रिपति अघावनु साचै नाइ ॥
अठसठि मजनु संत धूराइ ॥२॥
सभ महि जानउ करता एक ॥
साधसंगति मिलि बुधि बिबेक ॥३॥ (पन्ना ३७७)

गुरसिक्ख गुरु-घर क्यों जाता है और वहां साधसंगत क्यों करता है? इसका उत्तर उपरोक्त अमूल्य वचन में है कि गुरसिक्ख का मन सतिगुरु के अनुकूल हो जाए, शबद-गुरु के दर्शन करके उसे परमात्मा की प्राप्ति हो जाए, परमात्मा का प्रेम उसके मन में बस जाए, जिससे वह तृप्त हो जाए और उसकी सारी कामनाएं शांत हो जाएं। इन बातों की समझ उसे साधसंगत करने से ही आती है। साधसंगत अठसठ तीर्थों के स्नान से भी श्रेष्ठ है जो उसे सहज और समदृष्टा बना देती है। गुरसिक्ख परमात्मा के गुणों का गायन भी करता है और ध्यान भी। यह उत्तम मति उसे साधसंगत में बैठकर ही प्राप्त होती है।

सची संगति सचि मिलै सचै नाइ पिआरु ॥
सचै सबदि हरखु सदा दरि सचै सचिआरु ॥
(पन्ना ५८६)

परमात्मा को साधसंगत से ही पाया जा सकता है। साधसंगत में ही परमात्मा के प्रेम का रस उपजता है। गुरु-घर की महानता इसी में है कि वहां गुरु-शबद है और साधसंगत है। इसी से वह सच का दर बन गया है। गुरु-घर में गुरसिक्ख बुद्धि-विवेक की याचना करे और साधसंगत में बैठकर उसे हासिल करे। साधसंगत में स्वयं निरंकार का वास है।

निरंकारु आकारु करि सतिगुरु गुरां गुरू अबिनासी।
पीरां पीरु वखाणीऐ नाथां नाथु साधसंगि वासी।
गुरमुखि पंथु चलाइआ गुरसिखु माइआ विचि उदासी।. . .
गुरमुखि मिलि परवाण पंच साधसंगति सच खंड बिलासी। . . .
मिठा बोलणु निव चलणु खटि खवालणु आस निरासी।
सदा सहजु बैरागु है कली काल अंदरि परगासी।

*E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. : ९४१५९६०५३३

साधसंगति मिलि बंद खलासी ॥ (वार ३९:१७)

साधसंगत में निरंकार है तो निरंकार के गुण ही वहां प्रकट होंगे और उसके गुणों का प्रवाह सभी को अपने में समेटने के लिए तैयार होगा। परमात्मा सच है इसलिए साधसंगत करने वाले को सच में आनंद प्राप्त होने लगेगा। परमात्मा मीठे वचन बोलने वाला है अर्थात् उसकी भाषा सर्वहित, सर्वकल्याण की भाषा है। परमात्मा सर्वशक्ति-सम्पन्न और एकमात्र कर्ता व दाता है, किंतु वह कभी भी अपने किए को जताता नहीं, अपने दिये का दावा नहीं करता अर्थात् विनयी है। वह सभी का भरण-पोषण कर रहा है। साधसंगत करने का अर्थ इन गुणों को ग्रहण करना है। यदि गुरसिक्ख मीठा बोलने वाला (सर्वहित), विनयी (स्वयं को प्रकट न करने वाला) और परोपकारी (दूसरों का सहायक) नहीं है तो वह साधसंगत नहीं कर रहा है। निर्लिप्त रहकर, विकारों से विहीन होकर, भक्ति का भाव धारण करके गुरु (शबद) के दर्शन को जाना और साधसंगत करना गुरसिक्ख को सहज अवस्था में पहुंचा देता है, जिससे जीवन सफल हो जाता है। यदि सहज अवस्था प्राप्त नहीं हो रही है, परमात्मा के गुणों का प्रभाव नित्य के व्यवहार पर नहीं पड़ रहा है, तो वह साधसंगत नहीं है। साधसंगत है परमात्मा के रंग में डूब जाना :

महा पवित्र साध का संगु ॥
जिसु भेटत लागै प्रभ रंगु ॥१॥
गुर प्रसादि ओइ आनंद पावै ॥
जिसु सिमरत मनि होइ प्रगासा ता की गति मिति कहनु न जावै ॥१॥ (पन्ना ३९२)

साधसंगत में परमात्मा अपनी कृपा करके गुरसिक्ख के आचार और विचार को अपने रंग में रंग देता है। परमात्मा के रंग में रंगे हुए गुरसिक्ख को सेवा, परोपकार में आनंद आने लगता है जिसे वह कभी प्रकट नहीं करता। सारे कर्म वह परमात्मा के नाम पर (उसके कर्म मानकर) करता है और इसमें अपना कोई योगदान या श्रेय नहीं देखता है। सालों-साल गुरुद्वारे जाकर नियम से साधसंगत में बैठे, गुरबाणी सुने, अरदास में शामिल हो, किंतु व्यवहार में कठोरता, अहंकार, निंदा का वास हो, शोषण, अनाचार की वृत्ति हो तो व्यर्थ है साधसंगत।

पंडितु पड़ि पड़ि उचा कूकदा माइआ मोहि पिआरु ॥
अंतरि ब्रहमु न चीनई मनि मूरखु गावारु ॥
दूजै भाइ जगतु परबोधदा ना बूझै बीचारु ॥
बिरथा जनमु गवाइआ मरि जंमै वारो वार ॥
(पन्ना ८६)

साधसंगत है मन को परमात्मा से जोड़ना और गुरु-शबद को ग्रहण करना। ऐसा न करने वाले चाहे जितने भी प्रयास कर लें वे अज्ञानी ही रहेंगे। गुरु का शबद ग्रहण न करना दुखों का कारण बनता है। गुरु-शबद को धारण करने से सारी चिंताएं और कलेश मिट जाते हैं :

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥
जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥१॥रहाउ॥
ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥१॥
जो प्रभ कीनो सो भल मानिओ एह सुमति साधू ते पाई ॥२॥
सभ महि रवि रहिआ प्रभु एकै पेखि पेखि नानक बिगसाई ॥ (पन्ना १२९९)

आज मनुष्य के तनाव और दुख का सबसे बड़ा कारण है दूसरों के प्रति ईर्ष्या और जलन। वह दूसरों से सदैव भयभीत रहता है और स्वयं

को असुरक्षित महसूस करता रहता है। वह दूसरों के पराभव में अपनी विजय देखता है। वह दूसरों को दुखी देखकर स्वयं सुखी होना चाहता है। यह वृत्ति जीवन भर उसे परेशान रखती है जबकि हासिल कुछ भी नहीं होता। इसका हल साधसंगत में ही है। साधसंगत में जाकर परमात्मा की ऐसी कृपा प्राप्त होती है कि सारे द्वेष मिट जाते हैं और सर्वत्र परमात्मा के रूप के दर्शन होने लगते हैं। परमात्मा की सर्व-व्यापकता देखकर मन हर्ष से भर उठता है। तब अपने-पराए का भेदभाव मिट जाता है। परमात्मा से जुड़कर भेदभाव से ऊपर उठ गया गुरसिक्ख सच्चा दास बनकर सेवा करने की आशा रखता है :

प्रभ इहै मनोरथु मेरा ॥
क्रिपा निधान दइआल मोहि दीजै करि संतन का चेरा ॥ रहाउ ॥
प्रातहकाल लागउ जन चरनी निस बासुर दरसु पावउ ॥
तनु मनु अरपि करउ जन सेवा रसना हरि गुन गावउ ॥१॥
सासि सासि सिमरउ प्रभु अपुना संतसंगि नित रहीऐ ॥
एकु अधारु नामु धनु मोरा अनदु नानक इहु लहीऐ ॥ (पन्ना ५३३)

सेवा की भावना गुरसिक्ख के मन में इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि वह परमात्मा को अपने जीवन का आधार बना लेता है और परमात्मा के गुणों के अनुकूल स्वयं को बनाने में उसे आनंद मिलता है। सेवा करना उसका उद्देश्य बन जाता है, क्योंकि परमात्मा के सारे गुण सेवा के ही आयाम हैं, इसलिए गुरसिक्ख सच्चा सेवक बनकर दिन-रात सेवा में लगा रहता है। वह निरंतर साधसंगत करता है अर्थात् परमात्मा के गुणों से स्वयं को जोड़ता है, ताकि पूर्ण समर्पण से सेवा कर सके। परमात्मा के गुणों के बिना सेवा हो ही नहीं सकती। सेवा के लिए मन में दया, करुणा, विनम्रता, सहजता, परहित और सम्यक दृष्टि आवश्यक है। ये गुण साधसंगत से ही प्राप्त होते हैं और गुरमुख सेवा करने में समर्थ हो पाता है। गुरु-घर की साज-संभाल, लंगर पकाने और छकाने का कार्य आदि तो एक वेतन पाने वाला भी कर सकता है, किंतु उसे सेवा का दर्जा नहीं दिया जा सकता। सेवा को गुरमति ने शारीरिक श्रम से अधिक मन की भावना से जोड़ा है :

जिना हुकमु मनाइओनु ते पूरे संसारि ॥
साहिबु सेवन्हि आपणा पूरै सबदि वीचारि ॥
हरि की सेवा चाकरी सचै सबदि पिआरि ॥
हरि का महलु तिन्ही पाइआ जिन्ह हउमै विचहु मारि ॥
नानक गुरमुखि मिलि रहे जपि हरि नामा उर धारि ॥ (पन्ना ५१२)

परमात्मा की सेवा गुरु-शबद को विचार कर मन में धारण किए बिना नहीं हो सकती है। शबद को पूरी श्रद्धा, सत्कार और प्यार से मन में धारण करना है ताकि मन के अंदर कोई दुविधा न रहे, कोई बाध्यता न रहे। प्यार में कोई बाध्यता और दुविधा नहीं होती है। गुरबाणी सचेत करती है कि सेवा तभी सफल है जब बिना किसी अहं के की गयी हो। मन परमात्मा में मिल एकरस हो जाए; गुरु-शबद को प्यार-सत्कार से मन और संकल्प में धारण करें तो सेवा सतिगुरु स्वयं करवा लेगा जो सच्ची सेवा होगी :

मेरै मनि मिसट लगे प्रिअ बोला ॥
गुरि बाह पकरि प्रभ सेवा लाए सद दइआलु हरि ढोला ॥१॥रहाउ॥

प्रभ तू ठाकुरु सरब प्रतिपालकु मोहि कलत्र सहित सभि गोला ॥
माणु ताणु सभु तूहै तूहै इकु नामु तेरा मै ओल्हा ॥१॥
जे तखति बैसालहि तउ दास तुम्हरे घासु बढावहि केतक बोला ॥
जन नानक के प्रभ पुरख बिधाते मेरे ठाकुर अगह अतोला ॥ *(पन्ना १२११)*

लगता है कि गुरु-घर की सेवा को भी सामाजिक-आर्थिक हैसियत के हिसाब से बांट दिया गया है। सेवा करनी है किंतु वह जो अपने अनुकूल हो। ऐसे में कुछ लोग साधसंगत करते हुए भी, सेवा करते हुए भी गुरमति से कोसों दूर रह जाते हैं और परमात्मा से उनका कोई सम्बंध नहीं बन पाता है। परमात्मा ने ही दिया हुआ है। परमात्मा दे सकता है और ले भी सकता है। उसने दिया है तो उसकी कृपा है, पाने वाले की कोई योग्यता नहीं। उसने ले लिया है तो उसकी मर्जी है, कोई उलाहना नहीं। गुरसिक्ख को उसकी हर बात मीठी लगती है। परमात्मा उसे हर हाल में प्रिय लगता है। वही गुरसिक्ख का मान है, आधार है, टेक है। गुरसिक्ख तो बस, उसका सेवक है तन-मन और परिवार सहित। वह इतना दयालु है कि गुरसिक्ख को स्वयं ही सेवा का मार्ग दिखा देता है और उसके माध्यम से लोगों का कल्याण करता है। गुरसिक्ख सतिगुरु से विनती करता है कि उसे सेवा का अवसर मिले :

तउ किरपा ते मारगु पाईऐ ॥
प्रभ किरपा ते नामु धिआईऐ ॥
प्रभ किरपा ते बंधन छुटै ॥
तउ किरपा ते हउमै तुटै ॥१॥
तुम लावहु तउ लागह सेव ॥
हम ते कछू न होवै देव ॥१॥ रहाउ ॥
तुधु भावै ता गावा बाणी ॥
तुधु भावै ता सचु वखाणी ॥
तुधु भावै ता सतिगुर मइआ ॥
सरब सुखा प्रभ तेरी दइआ ॥२॥
जो तुधु भावै सो निरमल करमा ॥
जो तुधु भावै सो सचु धरमा ॥
सरब निधान गुण तुम ही पासि ॥
तूं साहिबु सेवक अरदासि ॥३॥
मनु तनु निरमलु होइ हरि रंगि ॥
सरब सुखा पावउ सतसंगि ॥ *(पन्ना १८०)*

श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने उपरोक्त वचन में गुरसिक्ख और परमात्मा के सम्बंध के साथ ही साधसंगत और सेवा के सम्बंध को भी सार रूप में संजो दिया है। गुरु साहिब के अनुसार गुरसिक्खों के पास सारे सुखों को पाने का एक ही रास्ता है और वो है साधसंगत, जिससे मन-तन निर्मल होकर परमात्मा के रंग में रंग जाता है। गुरसिक्ख को ज्ञान हो जाता है कि सारे गुणों का महासागर और दाता परमात्मा है और कोई नहीं। परमात्मा की कृपा से वह विकारों से मुक्त हो जाता है तथा सत्य के मार्ग पर चल पड़ता है। उसे विश्वास हो जाता है कि वही कर्म निर्मल हैं जो परमात्मा के गुणों के अनुसार हैं। परमात्मा कृपा करके उसे सेवा की राह पर ले जाता है। यहां सेवा और कर्म की बात एक निरंतरता में की गई है। परमात्मा के मनोनुकूल जो भी कर्म किया जाता है वह निर्मल कर्म है और हर निर्मल कर्म सेवा ही है, क्योंकि सेवा भी परमात्मा ही करवा रहा है। नाम जपना, किरत करना और वंड छकना सब परमात्मा की कृपा से, उसकी इच्छा से ही गुरमुख करता है। सेवा के बना लिये संकुचित दायरों को तोड़ने और उन्हें गुरबाणी के आशय के अनुसार व्यापक संदर्भ में देखने

की आवश्यकता है ताकि गुरमति के अनुसार सिक्ख कौम की चमक अक्षुण रखी जा सके। बहुत से लोग मिल जाएंगे जो कुछ सांसारिक प्राप्ति के लिए गुरु-घर की किसी सेवा का संकल्प ले लेते हैं। सेवा से जुड़ गए ऐसे मिथक मज़बूती से तोड़ने की आवश्यकता है, क्योंकि ये गुरमति के विरुद्ध हैं। गुरमति उस आत्मिक अवस्था के विकास की राह है जहां सांसारिक कामनाएं शून्य हो जाती हैं। वह उच्चता और श्रेष्ठता समझनी होगी।

गुरमति से श्रेष्ठ संसार में कुछ भी नहीं है। यह सहजता से प्राप्त ऐसी अवस्था है जहां परमात्मा है और आनंद है। गुरसिक्ख परमात्मा में समाहित हो गया है। उसके सारे दुखों का नाश हो गया है। गुरसिक्ख के लक्ष्ण 'सिध गोसटि' बाणी में सिक्ख पंथ के नायक और मानवता को अभिनव दृष्टि देने वाले प्रकाश-स्रोत श्री गुरु नानक देव जी ने इस तरह बताये हैं तथा जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पन्ना ९३८ से ९४६ तक विस्तारित हैं :

१. गुरसिक्ख के अंतर में गुरु-शबद उसे निरंतर जोड़े रखता है।
२. गुरमति से उसके विकार दूर हो जाते हैं।
३. गुरसिक्ख अंदर और बाहर भी गुरु-शबद से जुड़ा हुआ है।
४. गुरसिक्ख अपने को पहचानकर स्वयं को मिटा लेता है और जीवित मृत हो जाता है।
५. गुरसिक्ख परमात्मा के भय में रहता है।
६. गुरसिक्ख गुरु-शबद को भली-भांति विचार कर मन में धारण कर लेता है।
७. गुरसिक्ख सदैव परमात्मा को अपनी चेतना में रखता है।
८. गुरसिक्ख अपने साथ परिवार को भी परमात्मा से जोड़ता है और परमात्मा से प्रेमपूर्ण सम्बंध स्थापित करता है।
९. गुरसिक्ख सत्य-असत्य का भेद जान जाता है।
१०. गुरसिक्ख सहज ही सच को पहचान लेता है।
११. गुरसिक्ख का परमात्मा से जुड़ना एक सहजता है। उसके सारे वैर-विरोध मिट जाते हैं और वह सांसारिक गणनाओं से ऊपर उठ जाता है।
१२. गुरसिक्ख परमात्मा की भाषा, उसके मन्तव्य को समझ लेता है।
१३. गुरसिक्ख जानता है कि नाम-सिमरन के बिना परमात्मा नहीं मिलता।
१४. गुरसिक्ख जानता है कि गुरु-शबद की सेवा से ही वह परमात्मा से जुड़ेगा।
१५. गुरसिक्ख जानता है कि सतिगुरु ही मुक्ति का माध्यम है। उसके बिना 'नाम' नहीं प्राप्त होगा और दुख ही दुख है। बिना सतिगुरु के जीवन व्यर्थ चला जायेगा।

श्री गुरु नानक देव जी ने कहा कि अविनाशी परमेश्वर ने अजब मायावी खेल रचाया हुआ है जिसे गुरसिक्ख ही पहचान पाता है।

गुरमति ने संसार के खेल, परमात्मा के भेद और जीव की मूल अवस्था को पहली बार बड़े ही सरल, स्पष्ट और निश्चित ढंग से खोल कर सामने रखा और मुक्ति का असल मार्ग बताया। गुरमति के इस महान ज्ञान को जिसने समझ लिया और जो बताये गये मुक्ति के मार्ग पर चल पड़ा, वही गुरसिक्ख है। गुरमति एक ऐसा महान दर्शन है जिसने पिता, सखा, सहायक की तरह गुरसिक्ख को समझ, सीख और प्रेरणा दी है परमात्मा को पाने की। कहीं जाने की आवश्यकता नहीं, कुछ त्यागने की आवश्यकता नहीं। सांसारिकता से मन को निर्लिप्त कर

परमात्मा के इतना निकट होना कि विकार दूर पीछे छूट जाएं। आनंद परमात्मा में प्राप्त हो तो शेष सारे सुख फीके लगने लगें। इतना विलक्षण, अद्‌भुत उपकार! गुरमति से यदि हम दूर हैं और इस विस्मयकारी उपकार से महरूम हैं तो यह हमारा दुर्भाग्य है। आइए! गुरसिक्खी को निकट से जानें और अपनाएं। श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक की यात्रा हमारी आत्मिक परतंत्रता को तोड़कर निर्बाध आनंद तक ले जाने की यात्रा है जिसे गुरसिक्खी का नाम दिया गया।

तिन बेदीअन की कुल बिखै
प्रगटे नानक राइ ॥
सभ सिक्खन को सुख दए
जह तह भए सहाइ ॥४॥
चौपई ॥
तिन इह कल मो धरमु चलायो ॥
सभ साधन को राहु बतायो ॥
जो तां के मारग महि आए ॥
ते कबहूं नही पाप संताए ॥५॥
जे जे पंथ तवन के परे ॥
पाप ताप तिन के प्रभ हरे ॥
दूख भूख कबहूं न संताए ॥
जाल काल के बीच न आए ॥६॥५॥
(बचित्र नाटक)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उपरोक्त वचन में स्पष्ट किया है कि सिक्ख गुरु साहिबान ने समूची मानवता को धर्म की राह बताई। उनकी शिक्षाएं किसी खास वर्ग या श्रेणी के लिए नहीं थीं। जो लोग इस मार्ग पर चले उन्हें सुख प्राप्त हुआ, उनके सोग मिट गए।

सतिगुरु तो पूरे शाह अर्थात् सर्वोच्च पदवी वाले और परमात्मा स्वरूप हैं :

चारि वरनि चारि मजहबां छिअ दरसन वरतनि वरतारे।
दस अवतार हजार नाव थान मुकाम सभे वणजारे।
इकतु हटहुं वणज लै देस दिसंतरि करनि पसारे।
सतिगुरु पूरा साहु है बेपरवाहु अथाहु भंडारे।
लै लै मुकरि पानि सभ सतिगुरु देइ न देंदा हारे।
इकु कवाउ पसाउ करि ओअंकारि अकार सवारे।
पारब्रहम सतिगुरु बलिहारे ॥ (वार ४०:७)

बलिहार उस परमात्मा स्वरूप सतिगुरु के जो अथाह गुणों और अनंत सुखों का स्वामी है। सभी उस दाता से ले रहे हैं। आइए, हम भी उस सतिगुरु से गुरसिक्खी की अमूल्य दात-सौगात के लिए घुटने टेककर, शीश निवाकर याचना करें! 



शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष साहिबान : १४

प्रिंसीपल बावा हरिकिशन सिंघ

*-स. रूप सिंघ**

कोमल काव्य-कला के प्रेमी, विद्या-शास्त्री, बुद्धिमान, गुरसिक्खी जीवन-जाच के धारक, सफल वक्ता, अध्यापक व प्रिंसीपल, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष पद पर विराजमान होने वाले प्रिंसीपल बावा हरिकिशन सिंघ का जन्म २६ जुलाई, १८९२ ई. को बावा दसौंधा सिंघ जी मुख्य अध्यापक के घर डेरा इसमाईल खां में हुआ। आरंभिक शिक्षा गांव के स्कूल से प्राप्त कर उच्च शिक्षा की प्राप्ति हेतु आप जी फार्मन क्रिशचियन कॉलेज, लाहौर में दाखिल हो गए। २० वर्ष की उम्र में १९१२ ई. में आप जी एम. ए. अंग्रेजी साहित्य विषय में पास करके खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर में अंग्रेजी अध्यापक नियुक्त हुए। पंजाब यूनीवर्सिटी, लाहौर के सेनेट सदस्य के रूप में खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर के प्रिंसीपल मिस्टर वादन ने प्रो. बावा हरिकिशन सिंघ का नाम लिखकर भेजा तो यूनीवर्सिटी के चांसलर ने जांच उपरांत लिख भेजा कि प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ अकाली लहर में सक्रिय रहे हैं, इसलिए इनकी जगह किसी और का नाम भेजा जाए। मिस्टर वादन ने जवाब दिया कि मैं प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ की लियाकत, दियानतदारी तथा ईमानदारी के तुल्य किसी अन्य के नाम की सिफारिश नहीं कर सकता। आप जी को दो बार इंपीरियल एजूकेशन सर्विस अर्थात् सरकारी कॉलेज, लाहौर में प्रोफेसर की सेवा पर आने का निमंत्रण-पत्र प्राप्त हुआ, परंतु आप ने सरकारी नौकरी को अस्वीकार कर दिया।

खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर के बाद आप जी १९२६ ई. से १९४७ ई. तक गुरु नानक खालसा कॉलेज, गुजरांवाला (पाकिस्तान) के प्रिंसीपल रहे। देश-विभाजन के समय गुरु नानक खालसा कॉलेज, गुजरांवाला के प्रिंसीपल के रूप में आप शरणार्थी कैंप के कमांडेंट थे। इस कैंप का दौरा लार्ड माऊंट बैटन तथा पंडित जवाहर लाल नेहरू ने किया तो प्रिंसीपल साहिब ने गरीबों, निर्दोषों, मज़लूमों पर हुए अत्याचार, कत्लेआम तथा गुंडागर्दी की तसवीर अंग्रेजी में बाखूबी बयान की। देश-विभाजन होने के उपरांत आप ने सिक्ख नेशनल कॉलेज, कादीआं के प्रिंसीपल के रूप में सेवा आरंभ की, जो लगभग १९६० ई. तक निरंतर जारी रही।

१९५३ ई. में गुरू नानक खालसा कॉलेज, गुजरांवाला लुधियाना में आरंभ हुआ तो प्रिंसीपल साहिब गुजरांवाला खालसा एजूकेशनल कौंसिल के अध्यक्ष नियुक्त हुए। उन्होंने निरंतर १२ वर्ष यह सेवा निभाई।

गुरमति विचारधारा, सिक्ख रहित मर्यादा तथा सिक्ख परंपराओं को गुरमति की रोशनी में आगे ले जाने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ। लोभ-लालच व पद की भूख से स्वतंत्र हो सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए प्रयत्नशील रहे। प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर शुरू करने वालों में प्रमुख थे। उस

**सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००६; मो. ९८१४६-३७९७९*

समय आप जी खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर में बतौर प्रोफेसर सेवा निभा रहे थे, जब खालसा बिरादरी जत्थेबंदी ने तथाकथित पिछड़ी श्रेणियों को १२ अक्तूबर, १९२० को अमृत छकाया। नये सजे सिंघों को श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन कराने व कड़ाह प्रशादि की देग भेंट कराने के लिए जत्थेबंदी ने प्रोग्राम बनाया। कारण यह था कि समय के पुजारी व महंत श्री हरिमंदर साहिब में तथाकथित पिछड़ी श्रेणियों की देग स्वीकार नहीं करते थे। इन महंतों-पुजारियों की करतूतों के कारण अमृत के स्रोत दूषित हो चुके थे। सर्व-सांझे धर्म-स्थान श्री हरिमंदर साहिब में गुरमति मर्यादा बहाल करने के लिए खालसा बिरादरी द्वारा प्रमुख सिक्ख शख़्सियतों को विशेष न्यौता दिया गया, जिनमें प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ, प्रो. तेजा सिंघ तथा प्रो. निरंजन सिंघ खालसा कॉलेज प्रमुख थे। नये सजे सिंघों सहित जब खालसा बिरादरी वाले श्री दरबार साहिब पहुंचे तो आप जी ने पहले पुजारी, फिर ग्रंथी भाई गुरबचन सिंघ को बड़े अदब से मीठे शब्दों में विनती की कि संगत द्वारा अरदास करके कड़ाह प्रशादि बांट दिया जाए। यदि आपने अरदास न की तो हम लोग खुद अरदास करके कड़ाह प्रशादि बांट देंगे। विचार-चर्चा के पश्चात श्री हरिमंदर साहिब के पुजारी अरदास करने के बाद हुकमनामा लेने एवं कड़ाह प्रशादि बांटने के लिए सहमत हो गए।

१३ अक्तूबर, १९२० ई. को खालसा बिरादरी द्वारा दिखाई इस सक्रियता के तहत ज़िलाधिकारी, श्री अमृतसर ने श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर के प्रबंध हेतु सुधारवादियों की ९-सदस्यीय अस्थाई प्रबंधक कमेटी नियुक्त की, जिसमें प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ भी शामिल थे। १५ नवंबर, १९२० ई. को श्री अकाल तख़्त साहिब पर शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का गठन किया गया, जिसमें १७५ सदस्य चुने गए। चुनाव के उपरांत श्री अकाल तख़्त साहिब के सामने दरबार सजाया गया, जिसमें आप जी ने पहले हुई भूलों को बख़्शवाने वालों का ज़िक्र करते हुए तनख्वाहिओं के नाम लिए तथा उनको तनख्वाह लगाई गई। तनख्वाह लगाने वाले पांच प्यारों में प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ भी शामिल थे।

साका ननकाणा साहिब तथा गुरु का बाग व जैतो के मोर्चे के समय भी आप जी ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। १३ अक्तूबर, १९२३ ई. को गंगसर जैतो (नाभा मोर्चा) के समय आप गिरफ्तार हुए तथा लाहौर किले में बंद किए गए। इस मोर्चे के समय अंग्रेज हकूमत ने शिरोमणि गु. प्र. कमेटी तथा शिरोमणि अकाली दल को गैर-कानूनी करार दे दिया। शिरोमणि गु. प्र. कमेटी तथा शिरोमणि अकाली दल के अगुआ एवं सदस्य साहिबान जेल में बंद कर दिए। खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर के प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ, प्रो. तेजा सिंघ तथा प्रो. निरंजन सिंघ को अंग्रेज हकूमत ने गिरफ्तार कर लिया। प्रो. तेजा सिंघ तो बीमारी के कारण रिहा हो गए, परंतु आप जी को लम्बे समय तक जेल-यात्रा करनी पड़ी।

२५ जनवरी, १९२६ ई. को प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ ने अदालत में एक बयान अंग्रेजी में पढ़ा, जिसका सारांश है :--

"मैं हेली की प्रथम जुलाई, १९२५ की स्पीच का हवाला देकर बयान देना चाहता हूं कि मैंने गुरुद्वारा एक्ट बनाने में इमदाद की है और मैं ख़्याल करता हूं कि यह एक्ट गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर की ज़रूरी बातें

पूरी करता है। इस कानून के पास हो जाने के बाद सीधी कार्यवाही करने की कोई ज़रूरत नहीं रह जाती, इसलिए सिक्ख गुरुद्वारा प्रबंध के सम्बंध में कोई सीधी कार्यवाही नहीं करूंगा और मैं ईमानदारी तथा पूरे दिल से एक्ट को अमल में लाऊंगा। हकीकत यह है कि मैंने पहले से ही पंथ को इस पर अमल करने की अपील की हुई है।"

प्रिंसीपल साहिब के बाद १९ अन्य अकाली अगुओं ने एक-दूसरे के बाद उठकर अदालत में कहा कि हमारा भी वही बयान है जो प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ का है। इस तरह २० सज्जन अपना सामान समेटकर, रिहायी प्राप्त कर किले से बाहर आ गए। सारे अकाली अगुओं की रिहाई के उपरांत १४ मार्च, १९२७ ई को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का जनरल समागम बुलाया गया, जिसमें सिक्ख रहित मर्यादा निर्धारित करने के लिए सब-कमेटी बनायी गयी। इसमें प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ व प्रो. तेजा सिंघ मुख्य रूप से शामिल थे। ३० दिसंबर, १९३३ ई को सिक्ख रहु-रीत (रहन-सहन) कमेटी तथा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का विशेष जनरल इजलास बुलाया गया, जिसमें प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ भी शामिल थे।

सिक्ख गुरुद्वारा एक्ट--१९२५ के अनुसार हुए चुनाव के समय गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर के अगुआ दो गुटों में बंट गए। आप गुटबंदी से निर्लेप रहे तथा पंथक स्वरूप बनाए रखने के लिए हमेशा प्रयत्नशील व सक्रिय रहे। दिसंबर, १९३३ ई. में प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ तथा अन्य सिक्ख प्रोफेसरों ने मिलकर गुरसेवक सभा बनायी, जिसका मूल लक्ष्य पंथक एकता व गुटबंदी से रहित जत्थेबंदक नेतृत्व देना था। गुरसेवक सभा ने ही मास्टर तारा सिंघ जी को सक्रिय सिक्ख सियासत से कुछ समय के लिए किनारा करने की सलाह दी, जो मास्टर जी ने पंथक हितों में प्रवान कर ली। गुरसेवक सभा द्वारा ही मूल रूप में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का 'शब्दार्थ' तैयार करने के लिए कार्य १९३६ ई. में आरंभ किया गया, जो १९४१ ई. में सम्पूर्ण हुआ। यह 'शब्दार्थ' चार भागों में शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा निरंतर प्रकाशित किया जा रहा है।

२६ मार्च, १९४९ ई को प्रिंसीपल साहिब ने जत्थेदार श्री अकाल तख़्त साहिब को विनती की कि श्री अकाल तख़्त साहिब पर दरबार सजाने की आज्ञा दी जाए। दरबार का उद्देश्य २ मार्च, १९४९ ई को श्री दरबार साहिब में हुई दुर्घटना पर अफ़सोस का प्रायश्चित करना और पंथक मामलों पर विचार करना था। जत्थेदार मोहन सिंघ नागोके ने दरबार सजाने की आज्ञा दे दी।

२६ फरवरी, १९५५ ई. को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की कार्यकारिणी की मीटिंग में गुरमति लिट्रेचर की बढ़ोतरी के लिए नया गुरमति लिट्रेचर छपवाने हेतु सलाहकार बोर्ड नियत किया, जिसमें बावा हरिकिशन सिंघ, प्रिंसीपल, सिक्ख नेशनल कॉलेज, कादियां सदस्य थे। शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की धार्मिक सलाहकार कमेटी के भी बावा हरिकिशन सिंघ सदस्य थे, जिन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब छापने के बारे में अपनी रिपोर्ट २४ अप्रैल, १९५५ ई. को पेश की।

गुरुद्वारा गज़ट (पंजाबी-मासिक) मई, १९५५ के अनुसार शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के गत दिनों हुए चुनाव में श्रीमान मास्टर तारा सिंघ जी क्षेत्र नंबर ४६ तथा ८५ दोनों स्थानों से उम्मीदवार खड़े हुए थे। आप जी क्षेत्र नंबर

४६ से कामयाब माने गए और क्षेत्र नंबर ८५ रिक्त हो गया। क्षेत्र नंबर ८५ से बावा हरिकिशन सिंघ, प्रिंसीपल, सिक्ख नेशनल कॉलेज, कादियां, ज़िला गुरदासपुर सदस्य, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी चुने गए।

कार्यकारिणी के प्रस्ताव नंबर ८५४, २४ अप्रैल, १९५५ के अनुसार स. मुखतिआर सिंघ कार्यकारिणी सदस्य, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी चुने गए। उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया तथा उनकी जगह आप जी कार्यकारिणी सदस्य चुने गए। इसी दिन ही प्रस्ताव संख्या ८५५ के द्वारा मास्टर तारा सिंघ जी, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के त्याग-पत्र देने के कारण रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु स. अमर सिंघ दुसांझ ने बावा हरिकिशन सिंघ, कार्यकारिणी सदस्य का नाम तजवीज़ किया। स. परकाश सिंघ जी बादल ने इसकी ताईद की, उपरांत आप जी सर्वसम्मति से अस्थायी रूप से जनरल एकत्रता तक शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष चुने गए।

प्रस्ताव संख्या ९०३, २४ अप्रैल, १९५५ के अनुसार पेश होने पर प्रवान हुआ कि "सिंघ साहिब ज्ञानी फौजा सिंघ, जत्थेदार, तख़्त श्री केसगढ़ साहिब के अचानक गिरफ्तार हो जाने के कारण सिंघ साहिब ज्ञानी प्रताप सिंघ, जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब को अस्थायी रूप से बतौर जत्थेदार, तख़्त श्री केसगढ़ साहिब तबदील कर दिया जाता है और इनकी जगह श्री अकाल तख़्त साहिब की जत्थेदारी की सेवा अस्थायी रूप से जत्थेदार अच्छर सिंघ, ग्रंथी, श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर निभाएंगे।"

इसी तरह ७ जुलाई, १९५५ तक प्रिंसीपल बावा हरिकिशन सिंघ ने अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की सेवा निभाई। श्री दरबार साहिब पर अश्विनी कुमार द्वारा करवाए गए हमले के समय ये सीना तानकर खड़े हो गए कि पहले मुझे गोली मारी जाए। शिरोमणि गु. प्र. कमेटी में अध्यक्षता का इनका समय बहुत कष्टदायक था।

३ दिसंबर, १९५७ ई. को जनरल इजलास के समय मास्टर तारा सिंघ जी अध्यक्ष, प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ वरिष्ठ उपाध्यक्ष तथा प्रो. किरपाल सिंघ चक्क शेरे वाला कनिष्ठ उपाध्यक्ष चुने गए। ९ मार्च, १९५८ ई. को जनरल समागम बावा हरिकिशन सिंघ वरिष्ठ उपाध्यक्ष की अध्यक्षता में आरंभ हुआ, जिसमें पंथ के प्रसिद्ध विद्वान, व्याख्याकार, खोजी, लिखारी व प्रिंसीपल प्रो. तेजा सिंघ के अकाल चलाना कर जाने तथा मौलाना अबुल कलाम आज़ाद की मृत्यु पर शोक-प्रस्ताव पारित किया गया और प्रो. तेजा सिंघ की तसवीर स. तेजा सिंघ समुंदरी हाल में लगाने का फैसला हुआ। उपरांत वर्ष १९५७-५८ ई. का वार्षिक बजट पास किया गया तथा पाकिस्तान में रह गए गुरुद्वारों की यात्रा हेतु सिक्ख श्रद्धालुओं के लिए सुविधाओं वाला प्रस्ताव भी इनकी ही अध्यक्षता के समय पारित हुआ। इस जनरल इजलास के समय शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के ९६ सदस्य हाज़िर थे।

प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ अंतिम समय तक गुरु-ग्रंथ तक गुरु-पंथ को समर्पित रहे। उम्र भर कभी किसी पद-पदवी के पीछे नहीं भागे, बल्कि सम्मानित पदवियों पर सेवा निभाने का उनको सौभाग्य प्राप्त हुआ। आप जी द्वारा की गई पंथक सेवाओं का सम्मान श्री अकाल तख़्त साहिब से विशेष रूप में किया गया। धन्यवाद के शब्दों में प्रिंसीपल साहिब ने कहा था कि अकाली दल जैसी पंथक जत्थेबंदी को किसी भी रूप में क्षति न पहुंचाई जाए, इसी में हम सब की भलाई है। प्रो. प्रिथीपाल सिंघ (कपूर) के

बताने के अनुसार, कायदे-आज़म मुहम्मद अली जिनाह यूनीवर्सिटी, इसलामाबाद के प्रो-वाइस चांसलर डॉ. मुहम्मद यूसफ अबासी (जो गुजरांवाला में बावा जी के शागिर्द रहे थे) ने आप जी के बारे में अपने एक कॉनवोकेशन भाषण में कहा था कि "बावा हरिकिशन सिंघ श्री गुरु नानक देव जी के प्रमुख सिक्ख हैं, जैसे सिक्ख श्री गुरु नानक साहिब बनाना चाहते थे।"

१९५५ ई में केंद्र सरकार से राजसी बातचीत करने के लिए ऐसे सिक्खों की एक कमेटी बनायी गयी, जिसमें प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ को सदस्य चुन लिया गया। इस कमेटी ने उस समय के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू से बातचीत करनी थी। चाहे कि प्रिंसीपल साहिब उस समय स. हुकम सिंघ के निवास स्थान पर दिल्ली में ठहरे थे किंतु वे किसी मीटिंग में शामिल नहीं हुए। १९६० ई में पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला के सेनेट सदस्य नामजद हुए, परंतु वे किसी भी मीटिंग में शामिल न हुए। वास्तव में इस समय तक बावा जी निर्लेप अवस्था में विचरने लगे थे।

२० अगस्त, १९७८ ई को दिल्ली के सैनिक अस्पताल में कुछ समय बीमार रहने के उपरांत प्रिं. बावा हरिकिशन सिंघ इस नाशवान संसार को अलविदा कह गए।

कविताएं



शुद्ध भक्ति में सब विलीन हो!

सबमें तुमको ही पहचानूं!
हर घटना तव लीला मानूं!
खुद ही हों कर्त्तव्य-कर्म,
पर, कर्ता-धर्ता तुम्हीं को जानूं!
उच्च-भाव क्षण भर को आता।
पुनः जगत में उलझा जाता।
हर लो, हर लो माया जग की,
कृपा करो हे संकट-त्राता!
अनासक्त विषयों से कर दो!
भक्ति-भाव तन-मन में भर दो!
एक तुम्हारा ध्यान रहे बस,
बाकी सब इच्छाएं संहर दो!
निज़ता-परता से विहीन हो!
अहं-भाव से रिक्त-हीन हो!
लेन-देन से ऊपर उठकर,
शुद्ध भक्ति में सब विलीन हो!

निज गोद में विश्राम दो!

तुम प्रभो रसराज हो, आनंद परमानंद हो!
प्रेम रूपा भक्तिदाता, काटते सब बंध हो!
एक तुम ही नित्य हो, बाकी सभी का अंत है।
एक तुम ही सत्य भगवान, शेष माया-फंद है!
हम तुम्हारे तुम हमारे, और हम जायें कहां?
छोड़ दोगे तुम हमें तो, ठौर हम पायें कहां?
हो भले यह स्वार्थ मेरा, पर यही परमार्थ है!
हूं शरण मैं तो तुम्हारी, बस यही पुरुषार्थ है!
कब कृपा का बोध होगा, कब मिलोगे तुम प्रभो?
जो कमी-बाधा हो मुझमें, शीघ्र तुम उसको हरो!
और मत तड़पाओ भगवन, दीन को अब थाम लो!
हूं बहुत कमज़ोर मैं, निज गोद में विश्राम दो!



-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.), मो. ९४११६-०७६७२

ख़बरनामा

अमेरिका के यूबा सिटी में खुलेगा इंटरनेशनल सिक्ख सेंटर

श्री अमृतसर : ४ अक्तूबर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि विश्व भर के विभिन्न देशों में बसते सिक्ख भाईचारे के समक्ष आ रही मुसीबतों को सहज ढंग से हल करवाने तथा सिक्खों की पहचान सम्बंधी पड़ रही भ्रांतियों को दूर करके सिक्खी की प्रचार मुहिम को प्रचंड करने के उद्देश्य से पंथ की सिरमौर संस्था शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा अमेरिका की स्टेट केलीफोर्निया के प्रमुख शहर यूबा सिटी में इंटरनेशनल सिक्ख सेंटर खोला जा रहा है।

इस सम्बंधी पत्रकारों से बातचीत करते हुए उन्होंने कहा कि गत दिनों शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के वरिष्ठ उपाध्यक्ष स. रघूजीत सिंघ की अगुआई में एक चार-सदस्यीय वफ़द, जिसमें महासचिव स. सुखदेव सिंघ भौर, कार्यकारिणी सदस्य स. रजिंदर सिंघ महिता तथा उप सचिव स. परमजीत सिंघ शामिल थे, को यूबा सिटी में भेजा गया था। उन्होंने अमेरिका के प्रसिद्ध सिक्ख स. दीदार सिंघ (बैंस) के साथ विशेष रूप से मुलाकात की तथा उनके द्वारा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी को यूबा सिटी में भेंट की गई लगभग १३ एकड़ जमीन पर सिक्ख सेंटर की स्थापना करने के सम्बंध में उनके साथ विशेष तौर पर विचार-विमर्श किया। जत्थेदार अवतार सिंघ ने पत्रकारों को यह भी जानकारी दी कि उक्त मिशन की पूर्ति के लिए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा यू. एस. ए. (आई एन. सी) के लाभ तहत संस्था पंजीकृत करवाई गई है, जिसकी पहली मीटिंग करने के उपरांत उक्त संस्था का खाता बैंक ऑफ अमेरिका की यूबा सिटी ब्रांच में खोल दिया गया है। इसके दौरान उन्होंने यह भी बताया कि भविष्य में उक्त सेंटर सिक्ख कौम को विश्व स्तर पर आने वाली प्रत्येक मुश्किल का सार्थक हल निकालने में मुख्य भूमिका अदा करेगा। उन्होंने कहा कि इंटरनेशनल सिक्ख सेंटर सभी विश्वव्यापी आधुनिक तकनीकों से युक्त होगा तथा सिक्खी के प्रचार में अपना बहुमूल्य योगदान डालेगा। उन्होंने यह भी बताया कि नवंबर माह में यूबा सिटी में गुरु नानक पातशाह के गुरुपर्व के सम्बंध में आयोजित किए जा रहे महान नगर कीर्तन के दौरान शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा संसार की सभी प्रमुख भाषाओं में छापा गया धार्मिक लिट्रेचर बड़े पैमाने पर मुफ्त बांटा जाएगा। इस लिट्रेचर को सभी देशों की अंबेंसियों में भी मुहैया करवाया जाएगा, ताकि सिक्खों की विलक्षण पहचान के बारे में दुनिया के ज्यादा से ज्यादा लोगों को जागरूक किया जा सके। जत्थेदार अवतार सिंघ ने बताया कि यूबा सिटी में स्थापित किए जाने वाले इंटरनेशनल सिक्ख सेंटर के प्राथमिक प्रड़ाव में गुरमति सम्बंधी जानकारी, गुरमुखी की पढ़ाई, श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पाठ-बोध की जानकारी तथा सुंदर दसतार सजाने की सिखलाई दी जाएगी। इसके साथ ही सेंटर में अलग-अलग समय पर सिक्ख धर्म से सम्बंधित मामलों सम्बंधी बड़े स्तर पर सेमीनार भी आयोजित किए जाएंगे। उन्होंने बताया कि शिरोमणि

गु. प्र. कमेटी द्वारा इंटरनेशनल सिक्ख सेंटर की सुंदर व आधुनिक इमारत का मास्टर प्लान तथा नक्शा आदि तैयार करवाकर जल्द ही विदेशों में बसती सिक्ख संगत के सहयोग से निर्माण आरंभ किया जाएगा तथा सेंटर का शिलान्यास फरवरी, २०१४ में किया जाएगा।

इस अवसर पर स. हरजाप सिंघ सुलतानविंड, सदस्य, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, स. रूप सिंघ तथा स. सतबीर सिंघ सचिव, स. मनजीत सिंघ निजी सचिव अध्यक्ष साहिब, स. दिलजीत सिंघ अपर सचिव तथा स. बिजै सिंघ, स. जगजीत सिंघ व स. परमजीत सिंघ उप सचिव आदि उपस्थित थे।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप पहुंचाने खातिर दो और ए. सी. बसें तैयार करवाई गईं

श्री अमृतसर : ५ अक्तूबर : श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप देश भर में पहुंचाने खातिर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने सारी सुविधाओं वाली दो और ए. सी. बसें तैयार करवाई हैं। इन बसों की जांच-पड़ताल करते हुए जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने बताया कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप लेकर जाते समय मर्यादा को मुख्य रखते हुए इन बसों में प्रत्येक पावन स्वरूप के लिए अलग-अलग कैबिन तैयार करवाया गया है। उसके ऊपर गद्दा लगा हुआ हैं। प्रत्येक बस में ३५० पावन स्वरूप एक ही समय ले जाने की सुविधा बनाई गई है। ये बसें पूरी तरह से वातानुकूलित हैं तथा हाईड्रोलिक हैं। इन बसों में पावन स्वरूप लेकर जाने वाले कर्मचारियों के लिए १० सीटों का अलग से प्रबंध है। उन्होंने बताया कि इनमें सवार होते समय खिड़की में ही हाथ-पैर स्वच्छ करने के लिए पानी की टैंकी भी उपलब्ध है।

आंध्र प्रदेश में घटित घटना अति निंदनीय : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ६ अक्तूबर : आंध्र प्रदेश के विजयानगरम शहर में हमलावरों द्वारा गुरुद्वारा साहिब पर हमला करके श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप तथा पीड़ा साहिब को सड़क पर रखकर आग लगा देने की घटना की सख्त शब्दों में निंदा करते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने इसको निंदनीय कार्यवाही बताया है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि हमलावरों ने पहले वहां बसते अल्पसंख्यक सिकलीगर सिक्खों के परिवारों को निशाना बनाते हुए उनके घरों की तोड़-फोड़ की, बच्चों के साथ मारपीट की तथा बाद में गुरुद्वारा साहिब पर हमला कर दिया। इस घिनौनी घटना के कारण दुखित सिक्खों के मन में भारी रोष है। उन्होंने बताया कि उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ तथा आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री एन. किरन कुमार रेड्डी को पत्र लिखकर मांग की है कि दोषी व्यक्तियों के खिलाफ शीघ्र व सख्त कानूनी कार्यवाही की जाए तथा वहां बसते सिक्खों की जान-माल एवं गुरुद्वारा साहिबान की सुरक्षा के पुख्ता प्रबंध किए जाएं।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-११-२०१३